प्रेम के तीर

लेखक
साहित्य शिरोमणि श्रीमन राजा चक्रधरसिंह
(रायगढ़ नरेश)

प्रकाशक
पं० लक्ष्मणप्रसाद मिश्र
साहित्य समिति, रायगढ़

प्रथम संस्करण

मूल्य रु० ४.००

मेसर्स कालीचरण त्रिवेदी एन्ड कम्पनी

प्रिन्टर और पब्लिशर

के लिये

गिरजाप्रसाद श्रीवास्तव ने

हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग में छापा

तथा

साहित्य समिति, रायगढ़ ने

प्रकाशित किया।

पात्र—सूची

पुरुष-पात्र

सूर्यसिंह—	कन्नौज के महाराज
प्रभाकरसिंह—	कन्नौज-राज्य के मंत्री
चन्द्रसिंह—	कन्नौज के युवराज
मणिसिंह—	युवराज के सुहृद् और मंत्री प्रभाकरसिंह के सुपुत्र
देवसिंह—	उज्जैन-नरेश
अजितसिंह—	मालवाधिपति
अजबसिंह—	अजितसिंह के मित्र
बुद्धूमल—	एक वृद्ध धनी-सेठ
थैला—	बुद्धूमल का हँसोड़ नौकर
चौपटचन्द—	एक चलता-पुर्जा धूर्त्त।
कालू—	डाकुओं के एक दल का सरदार और एक तिलस्म का अधिपति

(कालू के आश्रित डाकू, चोबदार और पंडित-गण)

स्त्री-पात्र

प्रभा—	उज्जैन की राजकुमारी
विभा—	राजकुमारी की सखी
चंचल-केसर—	मालवा-राज्य की दो प्रसद्धि वेश्यायें
बुधिया—	कालू की परित्यक्ता युवा स्त्री
सुन्दर बाई—	एक वेश्या

प्रेम के तीर

अङ्क १

दृश्य १

राग छायानट—झपताल

(स्थायी)

मदन-मद-कदन हर ! जगत के दुख हरो
अभिनव सुखमय सुषमा से सदा गिरिपते ! भव करो।

(अन्तरा)

मृदु मधुर 'प्रेम के तीर' नव छवि भरे
जगत में सुख भरें, प्रमुद दें, यश लहें
चरण कमल द्युति हो, मधुर मधुर स्तुति हो
अमल नवल द्युति हो, सुख भरो ॥

दूसरा दृश्य

[स्थान—कन्नौज के महल का एक हिस्सा। महाराज सूर्य सिंह अपने मंत्री प्रभाकर सिंह के साथ टहल रहे हैं।]

सूर्य सिंह

मंत्री जी ! युवराज चन्द्रसिंह अब काफ़ी बड़े हो चुके हैं ! क्या आप के ख़याल में अब उनकी शादी जल्द ही न हो जानी चाहिये ?

मंत्री

यह तो ज़रूरी बात है महाराज ! लेकिन मैं देखता हूँ कि युवराज साहब की तबीयत दुनियादारी से कुछ हटती-सी जा रही है।

महाराज

यही तो मैं भी देख रहा हूँ मंत्री जी ! इसी डर से तो मैं जल्द ही उनकी शादी करा देना चाहता हूँ। इस दुनियाँ में औरत ही तो एक मजबूत बेड़ी है जो ऊँची उड़ान भरने वालों को भी पस्त कर उन्हें इसी दुनियाँ में पड़े रहने

के लिये मजबूर कर देती है। मंत्री जी, युवराज को बुलवाइयेगा ?

मंत्री

जो आज्ञा महाराज !

[नेपथ्य की ओर देखकर]

कोई है ?

चोबदार

[आकर तथा प्रणाम करके]

आज्ञा।

मंत्री

श्रीमान् युवराज साहब से निवेदन करो कि श्री महाराज साहब ने उनका स्मरण किया है !

चोबदार

[झुक कर प्रणाम करने के बाद]

जो आज्ञा।

[जाता है]

मंत्री

युवराज की विलक्षण प्रकृति है महाराज ! इस उम्र में जब कि ग़रीबों के लड़के भी खाने-पीने और मौज उड़ाने की धुन में मस्त रहते हैं, वे ऐशो-आराम की चीज़ों की तरफ़ नज़र भी न डालते हुए एकदम अध्यात्म-चिन्ता और लोक-सेवा में लगे रहते हैं। चार बजे उठना, स्नान के बाद भक्ति-भाव से भगवान् की याद करना, सूरज निकलने से पहिले महल से बाहर निकल जाना, राज के काम देखना और दीन-दुखियों की पुकारें सुनकर फ़ौरन उनका इन्तिज़ाम कर देना, ग़रीब-अमीर सब से भाई के समान मिलना, रात के ग्यारह बजे तक इसी तरह काम में लगे रहना, यह तो उनका रोज़ का हिसाब है। दिन के बाद महीने और महीनों के बाद साल गुज़रते जा रहे हैं लेकिन युवराज का यह क्रम बदलता ही नहीं। कितनी अच्छी बात है ?

महाराज

ठीक कहते हो मंत्री ! परन्तु जिन्दगी में काम के साथ आराम भी तो चाहिये, यदि मनुष्य कर्म की ज्वाला ही में दिन-रात घधकता रहा और उसने प्रेम की शान्ति का

मज़ा न पाया तो क्या वह बहुत दिनों तक उसी तरह चलता जायगा ? उसकी ज़िन्दगी किसी न किसी दिन ज़रूर भार-रूप हो जायगी और उस वक़्त उसकी दुर्दशा का फिर क्या ठिकाना होगा ? प्रेम वह ओस है जो कर्तव्य के फ़ूलों में ताज़गी लाती है और पत्नी वह रात है, जो प्रेम के ओस-बिन्दु बरसाया करती है। मंत्री जी, मैं चाहता हूँ कि युवराज बहुत जल्द शादी कर लें और मैं समझता हूँ कि आप भी मानते होंगे, मेरी इस बात में कितनी दूरन्देशी है।

मंत्री

यह देखिये, युवराज साहब सामने से आ रहे हैं।

चन्द्रसिंह

[आकर]

पिता जी के पूज्य चरणों में प्रणाम।

[झुक कर अभिवादन]

सूर्यसिंह

[आशीर्वाद देते हुए]

जीते रहो बेटा ! ईश्वर करे, तुम्हें भी इसी प्रकार पुत्र-रूप में प्रणाम करने वाला कुमार शीघ्र मिले।

चन्द्रसिंह

[चौंक कर, अपने आप]

हैं, आज यह कैसा उपक्रम !

[पिता की ओर मुख कर के]

पिता जी, मैं यह आशीर्वाद नहीं चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि आप मुझ को बल का आशीर्वाद दें, बुद्धि का आशीर्वाद दें, ईश्वर-प्राप्ति का आशीर्वाद दें, जिससे मेरा सच्चा कल्याण हो।

बढ़े वह बुद्धि जिससे विश्व की महिमा बखानूँ मैं।
बढ़े वह शुद्धि जिससे आप को हरि अंश मानूँ मैं॥
बढ़े वह शक्ति जिससे विश्व-रक्षा छत्र तानूँ मैं।
बढ़े वह भक्ति जिससे ईश का कारुण्य जानूँ मैं॥
पिता ! मुझको सदा लगता है आशीर्वाद वह प्यारा।
मिले जिससे मुझे कल्याण-जीवन की नयी धारा॥

सूर्य सिंह

परन्तु कुमार ! क्या तुम सन्तान-सुख के आशीर्वाद को मामूली समझते हो। आह ! यदि तुम पिता होते तो

समझते कि कश्यप-अदिति ने या नन्द-यशोदा ने मोक्ष न माँग कर पुत्र क्यों माँगा था।

गृहस्थी का मनोहर फल गृहों का वह उजाला है।
सुधा-साना सदा सुन्दर छलकता प्रेम-प्याला है॥
अमर करने को अपना वंश वह साधन निराला है।
इसी से इस जगत् में बस उसी का बोलबाला है॥
बड़े राजर्षि तक भी पुत्र की हैं कामना करते।
उसी के हेतु तप करते दुखों का सामना करते॥

चन्द्रसिंह

पुत्र के लिये विवाह करना पड़ता है और विवाह से ब्रह्मचर्य का नाश होता है। पिता जी ! मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मैं हनुमान और भीष्म के समान आजन्म ब्रह्मचारी रह कर जीवन बिता सकूँ।

सूर्यसिंह

विवाह दुनियाँ का नियम है और आजन्म ब्रह्मचर्य उसका अपवाद। यदि जवान पौधे अपने बीज अपने ही अन्दर छिपा रखना चाहें तो वे अपने साथ अपने नामो-निशान को भी इस दुनियाँ से मिटाते जायँगे।

चन्द्रसिंह

लेकिन मेरे मिटने से मनुष्य-समाज तो नहीं मिट सकता।

सूर्यसिंह

बेटा! दुनियाँ यही चाहती है कि अच्छे झाड़ के बीज ही संसार में ख़ूब फूलें-फलें।

चन्द्रसिंह

परन्तु अभी मेरी उम्र ही क्या हुई है पिता जी! अभी तो झाड़ ही अच्छा कहलाने योग्य नहीं हो पाया, फिर फूलने-फलने की कामना कैसी?

सूर्यसिंह

तो क्या तुममें अभी कोई और कसर बाक़ी है? यों तो उम्र भर आदमी तरक्क़ियाँ करता जाता है लेकिन जब वह पढ़-लिख कर तैयार हो चुका, जवान हो चुका, समझदार हो चुका, तब उसे ज़रूर ही शादी करके गृहस्थी सँभाल लेनी चाहिये। बेटा! मैं बुड्ढा हुआ। अब तुम्हें चाहिये कि सब बोझ ख़ुद सँभाल कर मुझे दुनियाँ के कामों से छुट्टी दो।

चन्द्रसिंह

[अदब से]

मैं इसके लिये तैयार हूँ पिता जी !

सूर्यसिंह

[प्रसन्न होकर]

क्या सच ?

[मन्त्री को देखकर]

तो मन्त्री जी, झटपट कोई राजकुमारी ठीक कीजिये, ब्याह का इन्तिज़ाम फ़ौरन शुरू कर दीजिये।

चन्द्रसिंह

नहीं पिताजी, मैं ब्याह के लिये तैयार नहीं हूँ। मैं सब दुनियावी कामों का बोझ सँभालने को तैयार हूँ। राजा वही सच्चा राजा है जिसका अपना ख़ास कुटुम्ब कोई भी न हो। समूची प्रजा ही मेरा कुटुम्ब है। सब स्त्रियाँ मेरी बहिने हैं, सब पुरुष मेरे भाई हैं, मेरी गृहस्थी सँभालने के लिये शादी की कोई ज़रूरत नहीं है। राज्य के जितने गृहस्थ हैं वे सब मेरी गृहस्थी सँभाले हुए हैं। उनके

रहते मुझे तुच्छ गृहस्थी की चिन्ता में डालने और ब्याह-बन्धन में बाँधने से क्या लाभ ! माना कि किसी ज़माने में विवाह का उद्देश था सन्तान। लेकिन आजकल, जैसा मैं पढ़ और सुन रहा हूँ, लोग विवाह मौज के लिये करते हैं। इस मौज में आकर वे अपना तन, मन, धन, सब नष्ट कर डालते हैं। अफ़सोस है कि पढ़-लिखकर होशियार होते हुए भी मनुष्य रूप के इन्द्र-धनुष को अपनी मुट्ठी में रखने के लिये इतना चंचल हो उठता है और फिर नारी-रूपी धधकती ज्वाला में पड़ कर पतंग की तरह जल मरता है। सुनता हूँ कि नारी एक विषभरा शर्वत है जो पहिले मीठा होकर मुँह लगता है और फिर ज़हरीली वासनाओं से हृदय को मटियामेट कर देता है। नारी के इस रूप से दूर रहने के लिये विवाह से ही दूर रहना अच्छा !

सूर्यसिंह

परन्तु नादान कुमार ! तुम यह नहीं जानते कि नारी के आकर्षण का तिरस्कार करके तुम जगत्पिता के नियम को ही उलटना चाह रहे हो ! विवाह इसी आकर्षण पर बँधा हुआ है और वह एक निश्चित सत्य है।

चन्द्रसिंह

अभी तो मुझे इस आकर्षण का ज़रा भी ज़ोर नहीं मालूम हुआ। शायद कभी मालूम भी न हो। जब होगा तब देखा जायगा। अभी से मैं इस कल्पित भय से क्यों भयभीत होऊँ।

सूर्यसिंह

अच्छा, तुम अब जा सकते हो।

चन्द्रसिंह

जो आज्ञा।

[प्रणाम करके प्रस्थान]

सूर्यसिंह

मन्त्री जी, देखा आपने! उसकी दृढ़ता कहाँ तक बढ़ गयी है! लेकिन उसने एक बात बड़े मार्के की कही। अभी उसे किसी नारी के आकर्षण का प्रभाव ही नहीं मालूम हुआ! इसलिये यह ज़रूरी है कि उसे भ्रमण के लिये बाहर भेजा जाय। अपने पुत्र मणिसिंह को भी साथ

कर दो और उसे समझा दो कि वह युवराज को राजाओं की राज-वाटिकाओं आदि की सैर करावे। सम्भव है, कहीं न कहीं किसी कुमारी के लिये कुमार का प्रेम उमड़ पड़े। फिर तो प्रेम के तीरों को अपना काम करते देर न लगेगी।

मंत्री

जो आज्ञा महाराज! ऐसा ही होगा।

[दोनों का प्रस्थान—परदा उठता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—एकान्त ऊसर का एक मार्ग, जहाँ ज्यादा झाड़ न हों और मैदान समान हो। अजितसिंह अकेले टहल रहे हैं।]

अजित

माना कि मालवा का राज्य उज्जैन से बहुत छोटा है। और इसलिये मैं महाराज वीरसिंह की बराबरी का नहीं हूँ, परन्तु फिर भी क्या मैं राजा नहीं हूँ! माना कि मेरी उम्र कुछ .ज्यादा है, परन्तु फिर भी क्या मैं जवानों की-सी उमंग नहीं रखता हूँ! माना कि मैं बहुत .ज्यादा सुन्दर नहीं हूँ लेकिन फिर भी क्या मैंने कई राजकुमारियों से ब्याह नहीं किया है और क्या वे सब की सब मुझे "प्राणनाथ, प्रियतम, प्राणेश्वर" आदि नहीं कहतीं? फिर क्या सबब है कि महाराज देवसिंह ने मेरी प्रार्थना को ठुकरा दिया और मेरे साथ प्रभावती के ब्याह को हँसी में उड़ा दिया? मैं क्या कोई हँसी की चीज़ हूँ? क्या मैं प्रभा को नहीं पा सकता? यदि बल से नहीं तो छल से सही। मैं

प्रभावती को ज़रूर ही अपनाऊँगा। वह मेरी और मेरी ही होकर रहेगी। यदि कोई कहे कि इसमें मेरा क्या हक़? तो मैं उससे पूछूँगा कि बाग़ीचे के सुन्दर फूल को झाड़ से तोड़ लेने का तुम्हारा क्या हक़? आकाश के सुन्दर पत्ती को जाल में फँसा लेने का बहेलिये को क्या हक़? समुद्र की तह में पड़े हुए हीरे और लालों को छीन ले जाने का लोगों को क्या हक़? सुन्दरता उपभोग चाहती है। जिसमें शक्ति है, वह उसे ख़ुशी से ले जा सकता है और उसका मनमाना उपयोग और उपभोग कर सकता है। यही दुनियाँ का क़ायदा है।

[बुर्क़ा डाले हुए दो स्त्रियों का प्रवेश। अजित के पास पहुँचकर बुर्क़ा उलट देती हैं और अभिवादन करके खड़ी हो जाती हैं।]

अजित

अच्छा, तुम लोग आ गईं। वाह, वादे की पक्की हो। किसी ने घूर कर देखा तो नहीं? घूँघट बुरा होता है। काली-कलूटी भी अगर घूँघट निकाल ले तो मनचले यार लोग उसकी सूरत देखने के लिये बेताब हो उठते हैं

और गोरी चिट्टी नौजवान अगर बिना परदे के चलें तो लोगों की निगाहें उस ओर बहुत कम खिंचती हैं।

चंचल

हुज़ूर का कहना बहुत ठीक है लेकिन सरकार! बुर्के और परदे में फ़र्क़ है। बुर्का अँधेरी रात की तरह खूबसूरती के सूरज को एकदम छिपा लेता है इसलिये कोई उसे देखने की फ़िक्र नहीं करता। परदा ग्रहन की तरह उसे सिर्फ़ अध-ढँका कर देता है इसीलिये यार लोग हुस्न का पूरा जलवा देखने को बेचैन हो जाते हैं। गो हम लोग वेश्यायें हैं और इसलिये .खूब खुलकर आ सकती थीं लेकिन जब आप ने बहुत ही पोशीदा तौर पर हमें याद किया था तो हम लोगों ने इस तरह छिप कर ही आना मुनासिब समझा।

अजित

शाबाश, तुम बहुत चतुर हो। मुझे विश्वास है कि तुम लोगों से मेरा काम ज़रूर पूरा होगा। लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि किसी ने तुम लोगों के ऊपर शक तो नहीं किया?

केसर

दुनियाँ हरदम अपने धन्धे में लगी रहती है महाराज ! किसी पर किसी तरह का शक करने की फ़ुरसत किसे है ! अपने जिगरी दोस्त का ख़ून करके एक क़ातिल जिस रास्ते से मूछें मरोड़ता हुआ निकल जाता है, एक ख़ूँख़ार डाकू भी डाके का माल लादे उसी रास्ते मस्तानी चाल से चला जाता है। उसी के पीछे एक जटाधारी गटरमाला सटकाता हुआ किसी के कामिनी-कंचन की फ़िराक़ में पैर बढ़ाता चलता है। लोग उन्हें देखते हुए भी नहीं देखते। कोई किसी पर शक नहीं करता। तब दो बुर्क़े वालियों को राह से गुज़रते देख किस को क्या पड़ी है कि जो किसी तरह शक करे।

अजित

तुम लोग जरूरत से ज्यादा होशियार मालूम पड़ती हो। बहुत होशियार आदमी भी बुरा है; क्योंकि वह मालिक की राय से काम न करता हुआ अपनी राय भिड़ाया करता है। मुमकिन है, तुमसे मेरा काम न हो सके।

चंचल

हम लोग होशियार हों या न हों, इससे कोई बहस नहीं सरकार ! लेकिन आपका काम बख़ूबी करेंगी। हमें मालूम है कि आप लोग हम से कोई अच्छा काम कभी न लेंगे। हम वेश्याएँ ठहरीं न ! समाज तो हमको अलग रखना चाहता है। वह समझता है कि हम अपने पापों से वेश्या बनीं और इस मामले में न उसका कोई हाथ है और न कोई ज़िम्मेदारी। तो फिर हम भी समाज की परवाह क्यों करें। हम तो पुकार पुकार कर कहती हैं कि हम डाकू हैं, न सिर्फ़ ज़र और माल की, बल्कि दीन और ईमान की भी; हम क़ातिल हैं, न सिर्फ़ अरमानों का ख़ून करने वाली, बल्कि जिस्मानी और रूहानी सेहत का भी गला घोंट देने वाली। लेकिन हमारे डाके और हमारे क़त्ल करने के तरीक़े ज़रा दूसरे ढंग के हैं। हम ज़हर देती हैं लेकिन शर्बत में मिलाकर। हम छुरा भोंकती हैं लेकिन गुड़ खिलाकर। हम डंक मारती हैं लेकिन मख़मल की आड़ करके। इतना करते हुए भी हम समाज को चुनौती दिया करती हैं। देखें, कोई कैसे हमें अलग करता है ? मंदिर में हमारा आदर ! शादी-ब्याह के जलसों

में हमारा मान ! बड़े-बड़े लखपती और तिलकधारी हमारे जूठे पान खाने के लिये हमारी जूतियाँ चाटते हैं महाराज ! और हम निष्ठुरता से उन्हें कंगाल बनाकर घर से निकाल बाहर कर दिया करती हैं। हमारा हृदय कितना कठोर है, यह न पूछिये। आप अपना काम बताइये।

केसर

महाराज ! क्या आप को किसी डाकू का पता लगाना है, क्या किसी चोरी का माल अथवा कहीं का खोया हुआ धन खोजना है, क्या किसी भोली-भाली नयी-नवेली को अपने जाल में फँसाना है ? हम सब कर सकती हैं। समाज के अत्याचारी हमारे मित्र हुआ करते हैं। समाज की गन्दी मोरियाँ हमारे ही दरवाज़ों से होकर बहा करती हैं। इसीलिये ऐरा-ग़ैरा माल सब यहीं होकर बहता रहता है और अच्छा माल भी ऐरों-ग़ैरों के लायक बनाने के लिये यहीं बहाकर अथवा बहका कर लाया भी जाता है।

अजितसिंह

मैंने इन व्यङ्गों को सुनाने के लिये तुम्हें नहीं बुलाया है। मेरा समय अमूल्य है। सुनो, मैं उज्जैन की

राजकुमारी प्रभावती का अपहरण करना चाहता हूँ। तुम लोग उसकी सहेलियाँ बनकर वाटिका के एकान्त में उसे ले जाओ। हमारे आदमी वहाँ पहुँच कर उसे उड़ा लावेंगे। "चन्द्रकान्ता" ही वह संकेत शब्द है जिसके उच्चारण से तुम हमारे आदमियों को पहिचान लोगी। जाओ, तुम वहाँ अपना नाम कमला और विमला रखना; लेकिन हाँ, मुझे इस बात का भी तो यक़ीन हो कि तुम मायावी लटकों में चतुर हो।

केसर

हम लोग महाराज के ही राज में रहती हैं। महाराज ने हम लोगों का नाम अच्छी तरह सुना ही होगा, तभी तो याद भी किया है। फिर अब कैसा यक़ीन चाहिये।

अजितसिंह

मैं देखना चाहता हूँ कि तुम लोग नाचने-गाने में, भाव-प्रदर्शन और क्रिया-चातुरी में कितनी निपुण हो। यह एकान्त ऊसर है। दूर-दूर तक नज़र डालने पर भी कहीं कोई दिखाई नहीं देता। इसलिये यहाँ मजे में नाच-गा

सकती हो और अदायें बता सकती हो। चंचल बाई, तुम्हीं पहिले आओ।

चंचल

[नाज़-नख़रे के साथ नाचती हुई गाती है।]

धुन देश—ताल दादरा

रीझे गालों की लाली पै ये दो जने
एक तो रीझा रस का भौंरा दूजे रसीले नैना फँसे
एक तो रीझा पी का हियरवा दूजे हमारे भी दाँत लगे।
रीझे गालों की०—

अजितसिंह

वाह कमाल है! इस वक्त की तुम्हारी शोख़ी देख कर तो यह ख़्याल ही नहीं आ रहा है कि तुम ने अभी फ़िलसफ़ा बघारा था, दर्शन शास्त्र बूँका था।

चंचल

महाराज, हम गिरगिट की तरह रंग बदलने में होशियार हैं। जब जैसा रंग लीजिये, हाज़िर हैं।

अजितसिंह

अच्छा केसर ! अब तुम भी कुछ सुनाओ।

केसर

बहुत अच्छा महाराज, सुनिये।

धुन माँड़—ताल दादरा

गोरी झाँकै खिरकियों पै ठाढ़ी
　　　　नज़र कहूँ आज लड़िहै।
जोबना झलकै अँगिया भीतर
　　　　सरकत सिर से सारी
　　　　नज़र कहूँ आज लड़िहै।

अजितसिंह

ओह ! तुमने तो चंचल से भी ज्यादा कमाल दिखाया। मुझे भरोसा हो गया कि तुम लोग मेरा काम जरूर पूरा करोगी। देखो, वह दूर से एक आदमी आ रहा है, इसलिए तुम लोग जल्द ही यहाँ से हट जाओ। काफ़ी रुपया अभी ही पा चुकी हो। काम हो जाने पर निहाल कर दूँगा, समझी? अच्छा, ख़्याल रहे, "चन्द्रकान्ता" संकेत

शब्द है और तुम लोग अब कमला-विमला हो—चञ्चल-केसर नहीं।

चञ्चल-केसर

जो आज्ञा महाराज !

[आदाब करके जाती हैं।]

अजितसिंह

[अकेले टहलते हुए]

बड़ी अजब औरतें हैं। समाज ने इनको सताया है तो ये समाज को सताने पर कमर कस चुकी हैं। अच्छा तो है। कुछ भी हो, मुझे अपने काम से मतलब ! इन शैतान की बच्चियों के दिल में रहम कहाँ ! ये ज़रूर ही प्रभा को फँसा लावेंगी। प्रभा, प्यारी प्रभा !

[सामने देख कर]

अरे, वह आगन्तुक तो कालू सरदार मालूम होता है। डाकू ने मेरा विश्वास कर लिया और यहाँ आ ही गया।

कालू

[सामने आकर अकड़ के साथ]

कहिये महाराज ! आपने मुझे कैसे याद किया।

अजितसिंह

[हँस कर]

तुम्हें गिरफ़ार करने के लिए।

कालू

महाराज ! यह नामुमकिन है। एकदम असम्भव है। कालू सरदार हरदम सतर्क होकर कोई काम करता है। उसके गिरफ़ार करने वाले स्वयं ही उसकी गिरफ़ में आ जाया करते हैं।

अजितसिंह

प्यारे दोस्त ! मैं ने तो तुम्हें दूसरे काम से बुलाया है। इस वक्त तो मज़ाक में तुम्हारी हिम्मत का अन्दाज़ा लगाने के लिए ही ऐसा कहा था। बात यह है कि मैं उज्जैन की राजकुमारी प्रभा को उड़वा मँगाना चाहता हूँ। जो माँगोगे सो दूँगा। तुम्हारी मदद के लिए वहाँ कमला-विमला नाम की दो सखियाँ हाज़िर रहेंगी। "चन्द्रकान्ता" कहने से वे तुम पर पूरा विश्वास कर लेंगी।

कालू

हूँ, ऐसा ! अच्छा, एक लाख रुपये चाहियें।

अजितसिंह

मैं डेढ़ लाख दूँगा। चाहे जितना बयाना ले लो।

कालू

नहीं, उसकी ज़रूरत नहीं। कालू अपने को किसी के पास बाँध कर नहीं रखता। जिस तरह काम करने में स्वतन्त्र और स्वेच्छाचारी है, उसी तरह काम का इनाम भी वसूल कर लेने में पक्का है। मैं प्रभा को लाकर आपसे रुपये ले लूँगा। अब आप जा सकते हैं।

अजितसिंह

[जाते जाते]

देखो भाई, तुम्हारा ही भरोसा है।

कालू

निश्चिन्त रहिये।

[अजित का प्रस्थान]

"प्यारे दोस्त !" "देखो भाई !" कौन कह रहा है? मालवाधीश्वर महाराज अजितसिंह जू देव ! किससे कह रहा है ? कालू डोम से, जो अभी इने-गिने महीनों से ही अपनी झाड़ू और टोकरी फेंक कर इधर-उधर डाके डालना प्रारम्भ कर चुका है और अब डाकू-सरदार बन कर भी तिलस्मी खोह में भेड़िये के समान पड़ा रहता है। फिर भी वे धर्मावतार ! जहाँपनाह ! अन्नदाता ! कहाते हैं और उन्हीं का प्यारा "दोस्त" और "भाई" कहाने में भी मैं अपना अपमान समझ रहा हूँ। कौन कहता है कि कालू डोम है, डाकू है, और यह डाकुओं से भी गया-बीता नीच अजितसिंह क्षत्रिय-कुल-तिलक और महाराज है ! परन्तु नहीं, मुझे इससे क्या मतलब ! मुझे तो धन चाहिये, और इस एक ही दाँव में एक लाख की बात है। फिर मैं क्यों चूकूँ ! समाज में जहाँ इतने छिपे भेड़िये हैं, वहाँ एक प्रकट भेड़िया मैं भी सही। दुनियाँ अपनी फ़िक्र आप कर लेगी। मैं अपने स्वार्थ से क्यों वञ्चित रह जाऊँ !

[प्रस्थान]

[परदा उठता है]

चौथा दृश्य

[स्थान—कंजूस अमीर सेठ बुद्धूमल का बैठकखाना]

थैला

[फ़र्राशी का काम करता हुआ]

आक् छिः ! धत्तेरे खबीस की । कचूमड़ निकाल डाला इस बुड्ढे ख़ुर्राट बुद्धूमल अत्तार ने । जान पड़ता है, अगले जनम में मैं धोबी था और यह गधा । मैं इस पर ख़ूब कपड़े लाद कर ख़ुद भी सवारी करता रहा होऊँगा । तभी तो इस जनम में यह रगड़ रगड़ कर काम ले रहा है, गोया मैं इसकी लुगाई होऊँ । घर मैं साफ़ करूँ, कपड़ों की मैं सँभाल करूँ, खाना मैं पकाऊँ, नोन तेल लकड़ी का हिसाब मैं रक्खूँ, दिन-रात की ख़िदमत में हाज़िरी मैं दिया करूँ, और जब तनख़्वाह माँगूँ तब एक न एक बहाना तैयार है । वाह रे ज़माने, और वाह मेरी क़िस्मत !

न देता एक पैसा भी बड़ा कंजूस है बुद्धू,
ज़माने से भी बढ़कर एक मक्खीचूस है बुद्धू ।
न सूरत देख ले कोई य' वह मनहूस है बुद्धू,
न गिरगिट है न चूहा है फ़क़त एक घूस है बुद्धू ।

वना गर शक्ल में यह फूस का मोटा-सा गट्ठा है,
तो समझो अक़्ल में बुद्धू बड़ा उल्लू का पट्ठा है।

आक् छि: ! धत्तेरे की। नज़ले ने वह ज़ोर बाँधा है कि भेजा ज़मींदोज़ होने के लिए बिलबिला रहा है। सेठ के यहाँ तरह तरह के तेल और सत सूँघते-सूँघते तो मैं तंग आगया। ओफ़ कितने-कितने काम लेता है अकेले मुझसे ! लोग कहते हैं कि अक़्ल दिमाग़ में रहती है लेकिन मैं तो कहूँगा कि वह पेट में रहती है। कोई न माने तो बुद्धूमल को देख ले। सिर छोटा और पेट मोटा। कंजूसी इस हद की कि सवेरे कोई नाम ले ले तो दिन भर का उपास हो जाय लेकिन अक़्ल इतनी तेज़ कि नौकरों को चिड़ियों की तरह जाल में फँसाये रहता है।

धुन कामोद—ताल कहरवा

कैसी मुझको मिली नौकरी कैसा यह घरबार।
कैसा मालिक मिला मुझे उफ़ हुआ बहुत बेज़ार॥
घिस घिस खिस खिस करके पिसता रहता हूँ दिन-रात।
फिर भी मुश्किल से ही पाता हूँ पैसे दो-चार॥
बचा अकेला ही यह बुड्ढा अपने घर में एक।
लाखों जोड़े, फिर भी अपनी आदत से लाचार॥

गाली दे-देकर यह कौड़ी-कौड़ी करे वसूल।
मक्खी चूस-चूसकर भरता रहता है भंडार॥
टूटे दाँत धँसी हैं आँखें, सन बन बैठे बाल।
फिर भी दुनियाँ फाँसा करता यह बुड्ढा बदकार॥

[नेपथ्य से आवाज़]

अरे ओ थैला !

थैला

जी हुज़ूर ! आक् छिः धत्तेरे की। मैं इधर हूँ।

बुद्धूमल

[आकर चिढ़ाते हुए]

आक् छिः, आक् छिः। जब देखो तब आक् छिः, धत्तेरे की, किया करता है। यह भी कोई भलमनसाहत है !

थैला

हुज़ूर ! दिल के फफोले इसी छींक में फोड़ कर बहा दिया करता हूँ। इसीलिये मुझे हरदम नज़ला रहा करता है।

बुद्धू

कल का छोकरा आज दिल के फफोले दिखाता है ! अरे, दिल के फफोले देखना हो तो इधर देख ! बुढ़ापे में सेठानी जी का विछोह हुआ फिर भी जिगर थामे हुए बैठा हूँ । होगा कोई मेरे सरीखा मर्द ! मुझे तो किसी दिन छींक न आई और तू आक् छिः, आक् छिः, किया करता है ।

थैला

हुज़ूर ! आप पैसों की गरमी से गरमागरम बने रहते हैं । बन्दा तो ग़रीबी की सर्द आहों से चट ज़ुकाम के चक्कर में आ जाता है ।

बुद्धूमल

[बिगड़ कर]

वाह ! मैं तुझ को दो पैसे रोज़ देता हूँ और फिर भी तू ग़रीब ही बना हुआ है ! अरे नादान ! दो पैसे, समझा; जिस में चार अधेले, आठ दमड़ियाँ या अड़तालीस कौड़ियाँ समा सकती हैं ! इतना माल रोज़ सिर्फ़ चौबीस ही घण्टे काम कर के तू पा जाता है ! और इन चौबीस घण्टों में भी

अफ़सोस है, कि तू कम से कम आठ घण्टे तो खाने-पीने और सोने के लिये चुरा लिया करता है। इतना भारी इनाम हर रोज़ पाकर भी तू अभी ग़रीब बना हुआ है!

थैला

तो सरकार! अगर ये दो पैसे मेरे इनाम के हुए तो फिर मेरी मजदूरी की तनख़ाह क्या हुई?

बुद्धूमल

वाह, मेरे कारख़ाने के इत्र की ख़ुशबू क्या मुफ़्त में आती है। तू इधर-उधर से गुजरता हुआ जो ख़ुशबू सूँघ लिया करता है, वही तेरी रोज़ी है।

थैला

आक् छिः, धत्तेरे हुज़ूर की, हाँ! हाँ हुज़ूर! वह ख़ुशबू जबरदस्ती, बे-बुलाये मेरी नाक में घुस पड़ती है; लेकिन शाबाश मेरा नज़ला! वह उसको दूर ही रखा करता है। फिर भी हुज़ूर से इस तरह की बातें सुनने को मिलती हैं। अफ़सोस्! अफ़सोस्! अफ़सोस्!

[बाहर से आवाज़ आती है—कोई है, कोई है।]

बुद्धूमल

तू तो मुँह लटका कर सचमुच थैला बन गया ! जा जा अपना काम देख ! देख, बाहर कोई साहब आये हुए हैं। जा, उन्हें इधर लिवा ला।

थैला

बस, सेठ जी बहुत हुआ ! अब मैं नौकरी नहीं करने का ! मेरा इस्तीफ़ा लीजिये।

बुद्धूमल

पागल, बेवकूफ़ ! क्या नौकरी छोड़ना इतना आसान है ? जब तक मेरे खाते में तेरे नाम का पन्ना मौजूद है तब तक तू क्या, तेरा मरा हुआ बाप भी मेरी नौकरी नहीं छोड़ सकता। जानता है, सिर्फ़ एक रुपये का सूद-दर-सूद ब्याज सिर्फ़ एक रुपये सैकड़े की दर से, सिर्फ़ एक सौ साल के बाद, पूरे एक लाख रुपयों से भी ज्यादा हो जाता है। फिर तेरे नाम की तो न जानें कितनी कलमें मेरे खाते में मौजूद हैं।

थैला

खाता आप का है और क़लम आपकी है। जो चाहे लिख लीजिये। लेकिन अदालत तो आपकी नहीं है। वहीं इन्साफ़ हो जायगा।

[फिर आवाज़ आती है—कोई है, कोई ?]

बुद्धूमल

अहमक़ ! मेरे इत्रों की .ख़ुशबू में वह ताक़त है कि अदालत का दिमाग़ भी मेरी तरफ़ झुक पड़ता है। लेकिन इस वक़्त तू इन बातों को न समझेगा। अपनी ज़िद पर है न ? ताज़ा .ख़ून ठहरा। अच्छा जा बच्चे भीतर जा, मैं ही उन साहब से बातचीत कर लेता हूँ।

[थैला का भीतर प्रस्थान; बुद्धू का दरवाज़े की तरफ़ जाना और चौपटचंद को लेकर आना]

चौपटचन्द

[एक कुर्सी पर बैठ कर]

सेठ जी !

[अफ़सोस के साथ]

अहहह ! कैसे वे दिन थे, जब हमारी सेठानी जी इस

गृहस्थी को सँभाले हुए थीं। मजाल थी कि इस कमरे में इतनी धूल रह पाती! नौकर आखिर नौकर ही ठहरे! आप इन बातों को कहाँ तक देख सकते हैं! दस-बारह रियासतों में फैला हुआ अपना इत्र का व्यापार देखियेगा कि यह नोन तेल लकड़ी का सवाल हल कीजियेगा। ख़ुद अपनी ही तरफ़ देखिये। बालों में तेल नहीं, आँखों में सुरमा नहीं, ओठों पर पान नहीं। यहाँ तक कि कपड़ों में साबुन भी नहीं। यह भी कोई बात है!

बुद्धूमल

[गहरी साँस लेकर]

इन बातों को कहकर आप मेरा जी न दुखाइये महाशय! आप अपने मतलब की बात कहिये।

चौपटचंद

वही कह रहा हूँ सेठ जी, लेकिन मेरा मतलब आपके आराम से है। आप जानते हैं कि मैं आपकी इस दूकान का पड़ोसी हूँ। इसलिए मैं आपकी तकलीफ़ नहीं देख सकता।

बुद्धूमल

तो आप क्या चाहते हैं ?

चौपटचन्द

आपका ब्याह !

बुद्धूमल

[आकस्मिक हँसी हँस कर]

ओहो हो, भाई वाह ! कैसा बनाया ! क्या तुम समझते हो कि मैं एकदम बुद्धू ही हूँ ? क़ब्र में पैर लटका कर अब मैं शादी करूँगा ?

चौपटचन्द

[जोश के साथ]

सेठ बुद्धूमल जी, आप भूलते हैं, सरासर भूलते हैं। अभी आपकी उम्र ही क्या हुई है? सिर्फ़ तीन बीसी ! लोग बीस बरस के आदमी को जवान कहते हैं। मैं साठ बरस वाले को तिगुना जवान कहता हूँ। अगर बीस बरस वाले को एक औरत रखने का हक़ है तो साठ बरस वाले को तीन तीन औरतें रखने का हक़ है। सत्तर-सत्तर, अस्सी-अस्सी

बरस के आदमियों ने शादियाँ की हैं और लड़के-बच्चे पैदा किये हैं। फिर आप तो अभी साठ ही बरस के हैं।

बुद्धूमल

[उदासी से]

भाई साहब, लड़के के बग़ैर तो सचमुच ही मेरा संसार सूना है। मेरे गाढ़े पसीने की कमाई मेरे कारख़ाने की .खुशबू की तरह उड़ जाने का ढङ्ग देख रही है; क्योंकि मेरे आगे-पीछे अब कोई नहीं! मैं तो किसी को गोद लेने का विचार कर रहा हूँ।

चौपटचन्द

अजी राम कहिये सेठ जी, नाहक़ की फ़िक्र में क्यों ग़र्क हो रहे हैं! शादी कर लीजिये शादी! दूसरे का लड़का दूसरा ही होता है। अपना माल अपना ही है।

बुद्धूमल

लेकिन चालीस-पचास साल की मेहनत के बाद भी जब मुझे लड़का न हुआ तो क्या भरोसा कि अब मिल ही जायगा?

चौपटचन्द

अजी खेत ख़राब होगा खेत ! अब नयी ज़मीन पर फिर जोत-गोड़ शुरू कीजिये, देखिये फल मिलता है कि नहीं ।

बुद्धूमल

और अगर बीज ख़राब हो ?

चौपटचन्द

तो भी क्या फ़िक्र । एक बड़े तजुर्बेकार हकीम साहब मेरे दोस्त हैं । वह कुश्ता खिलायेंगे कि बोटी-बोटी फड़क उठेगी । आप तो आप हैं, अगर सूखे ठूँठ पर भी वह दवा डाल दी जाय तो झाड़ एक दम हरा हो जाय ।

बुद्धूमल

उस दवा में ऐसी कौन सी चीज़ है ?

चौपटचन्द

यह पूछिये कि ऐसी कौन-सी चीज है जो उसमें नहीं है ? काष्ठादिक, रसादिक, मांसादिक, विष्ठादिक सभी कुछ वहाँ है । चिड़िया का सिर, साँप की दुम, मगर की नाभी, भालू का पित्ता, शेर की चर्बी, बगले का बीट सब वहीं है ।

बुद्धूमल

[उकताकर कान पर हाथ रखता हुआ]

राम, राम, राम, यह क्या कह डाला! आक्थूः आक्थूः! इन चीज़ों को कौन खायगा! सात पुरखों से मेरे यहाँ किसी ने मा···मा··मा···वही जिसका नाम लेते भी मुझे घिन होती है, बिलकुल नहीं छुवा। खाने की तो बात ही अलग है।

चौपटचन्द

अजी आपने पूछा तो मैंने मज़ाक में कह दिया। हकीम साहब तो सिर्फ सोंठ, मिर्च, पीपल सरीखी चीज़ों को तिलकधारी ब्राह्मण के हाथ से शुद्ध गङ्गाजल में धुला कर खल करवाते हैं और विशुद्ध श्यामा गऊ के दूध में अनेक मीठी कन्दें मिला कर, गोबर से पवित्र चूल्हे पर पकवाते हैं; उस समय चारों ओर वेदपाठी ब्राह्मण अच्छिन्न पाठ से वेद पढ़ते रहते हैं। तब कहीं यह कुश्ता तैयार होता है।

बुद्धूमल

इसका सबूत!

चौपटचन्द

मेरी ज़बान, दवा का ज़ायका, उसकी अनोखी ताक़त और सब से बढ़ कर आप की नयी सेठानी जी की शहादत !

बुद्धूमल

सूत न कपास और तुम लगे सेठानी-सेठानी कहने ! क्या अब इस बुढ़ापे में मुझे कोई सेठानी मिल भी सकती है ?

चौपटचन्द

अजी एक क्या हज़ारों मिल सकती है ? जहाँ पैसा है वहाँ क्या नहीं मिल सकता ?

बुद्धूमल

मुझे कोई पसन्द कर लेगी ?

चौपटचन्द

अजी, नयी नवेलियाँ तो बुड्ढा मर्द ही ज़्यादा पसन्द करती हैं। कोई उनके दिल की बात पूछे तो ? नये छोकरे प्रेम की बातें जानें क्या ? बुड्ढे ख़ुर्राट ही तो पूरे तजुर्बेकार

रहा करते हैं। और फिर लड़कियों की पसन्द क्या चीज़ है। माँ-बाप उन्हें जिधर ढकेल देते हैं, वे उधर की ही होकर रह जाती हैं। रुपयों की चमक में वह ताक़त है कि ऐसे सैकड़ों माँ-बाप इशारों पर नाच सकते हैं।

बुद्धूमल

कितना रुपया लगेगा ?

चौपटचन्द

यह न पूछिये सेठ जी, माल देख कर दाम लगता है। हज़ार-दो-हज़ार से लेकर दस-बीस हज़ार तक दाम चढ़ जाते हैं। आप जानते हैं कि इश्क़ और मुश्क़ एक राशि की चीज़ें हैं। इसलिये मुश्क की तरह ख़ुशबूदार इश्क़ के लायक़ माल किसी तरह दस-पन्द्रह रुपये तोले से कम में न मिलेगा।

बुद्धूमल

याने !

चौपटचन्द

याने उम्र सोलह साल, वज़न पचीस-तीस सेर, तोले अन्दाज़न सवा दो हज़ार, दाम तख़मीनन तीस हज़ार।

बुद्धूमल

[कान पर हाथ रख कर]

बाप रे बाप! इतना दाम! बस-बस हटो, भागो। मुझे सेठानी न चाहिये। पसीने की गाढ़ी कमाई का पैसा यों ही बहा दूँ ?

चौंपटचन्द

चौंकिये मत सेठ जी! आख़िर आपके बाद यह कमाई किसके काम आयेगी। और यह भी तो ख्याल कीजिये कि नयी शादी से बुढ़ापे में जवानी आ जाया करती है, ऐसा सभी वैद्यों का मत है। तो इस नयी जवानी के ज़ोर पर आप एक ही साल में तीस हज़ार से ज्यादा जमा निकाल सकते हैं। पानी का पैसा तो है। फूलों को निचोड़ कर शीशे में बन्द किया और पैसा तैयार।

बुद्धूमल

[सोचते हुए]

हाँ, बात तो कुछ ठीक है; लेकिन दाम की बात याद करके तो मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

चौपटचन्द

यह तो माल का मोल है। घटिया माल सस्ते दामों पर भी मिल सकता है।

बुद्धूमल

मैं घटिया-सटिया नहीं जानता। मुझे तो ऐसी जोरू चाहिये जो—

तन की चंचल मन की भोली आँखों में टकसाली।
नये नये जोबन से गदरे गोरे गालों वाली॥
ओठों में मुस्कान भरी हो चाल चले मतवाली।
लगे फूल की डाली-सी या रसगुल्ले की थाली॥

चौपटचन्द

मियाँ आने लगे रंग पर। अच्छा सेठ जी, तो ऐसी जोरू आप कितने दामों में ख़रीदियेगा।

बुद्धूमल

ज़रा सुन तो लीजिये। उसकी उम्र तेरह से कम न हो, सोलह से ज़्यादा न हो। उसकी उँचाई मेरे कन्धे से कम न

हो और मुँह से ज़्यादा न हो। उसका वज़न मेरी रान से कम न हो और तोंद से ज़्यादा न हो।

चौपटचन्द

यह तो ठीक है, लेकिन उसकी क़ीमत कितनी दीजियेगा ?

बुद्धूमल

सुनिये तो, वह न एकदम तोप हो, न बिलकुल तमंचा; बल्कि दोनों के बीच की दुनाली बन्दूक हो।

चौपटचन्द

वह तो सब ठीक है। मेरी पोष्यपुत्री ठीक वैसी ही है। मगर उसकी क़ीमत !

बुद्धूमल

फिर वही क़ीमत ! आप तो भेजा चाट गये। अरे, क्या वह यों ही मेरे ऊपर फ़िदा नहीं हो सकती !

चौपटचन्द

हैं भी तो आप बड़े ख़ूबसूरत ! अजी हज़रत, होश की दवा कीजिये। तबियत हो तो मोल-तोल की बात कीजिये, वरना मैं चला ।

[उठता है]

बुद्धूमल

अजी, बैठिये तो ।

[ज़ोर से]

अरे,अरे थैला,बाबू साहब के लिये पान-इलायची लाओ।

चौपटचन्द

क़ीमत बताइये, क़ीमत ।

बुद्धूमल

यही स स स स सौ रुपये ! उफ़् चमड़े की ज़बान फिसल गई। बड़ी क़ीमत लग गई ।

चौपटचन्द

सेठ साहब, यह इत्र का सौदा नहीं है, रूह का है रूह का ! ज़रा होश के साथ बात कीजिये ।

[उठ कर चलने लगता है]

बुद्धूमल

[हाथ पकड़ कर बैठाता हुआ]

अजी पान तो खाते जाइये। आप अपने ही आदमी हैं। दस-पाँच और ले लीजिये।

[थैला पान लेकर आता है]

चौपटचन्द

बस आप से सौदा नहीं हो सकता। आपकी क़िस्मत में सुख है ही नहीं।

[उठ कर चल देता है। बुद्धूमल उसको रोकते हुए उसके पीछे-पीछे चले जाते हैं।]

थैला

मैंने छिप कर सब सुन लिया है। अब बड़ा मजा आने वाला है। अब तो नयी सेठानी देखने के लिये मेरी भी तबियत मचली जा रही है। बस, अब कुछ दिन और यहीं रहूँगा। नौकरी इतनी जल्दी न छोड़ूँगा।

मज़ा आयेगा जब कमसिन सेठानी जी पधारेंगी,
है यह अब देखना किस पर वो तन-मन अपना वारेंगी।
किसे "प्यारे" कहेंगी और किसे जूतों से मारेंगी,
किसे आकर डुबो देंगी किसे दुनियाँ से तारेंगी।
उधर गर सेठ बुद्धूमल ज़ईफ़ी में भी छैला है।
इधर यह नौजवानी में बड़ा दमदार थैला है॥

[परदा गिरता है।]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—निर्जन सड़क]

बुधिया

[झाड़ू और टोकना लिए हुए आकर]

बड़ा बेदर्द है। एक दम कसाई है। जब इस तरह छोड़ कर चल देना था तो फिर मुझसे ब्याह ही क्यों किया। सुनती हूँ, अब वह डाकुओं का सरदार हो गया है और किसी तिलस्मी खोह में रहता है। तो फिर मानों पैसा ही सब कुछ हुआ, मैं कुछ न ठहरी। अब क्या करूँ! मिट्ठन बाई का घर साफ़ करने गई तो उसने कहा 'ओ नवेली बुधिया! तू भी हमारे कोठे पर क्यों नहीं बैठ जाती। चढ़ती जवानी वाले रूप के लासे पर तू लाखों के दिल फँसायेगी और लाखों के वारे-न्यारे कर देगी।' उसने मुझे उम्मीद पर कई गाने भी सिखा दिये हैं और नाज़ो-नख़रे भी बता दिये हैं। मेरी माँ बाल-विधवा सेठानी थीं। हराम-हमल होने के सबब घर से निकाल दी गईं। बेचारी परदे वाली औरत शहर के रास्ते भी न जानती थीं। कहाँ जायँ, क्या करें! दरवाज़े के पास रात भर अकेली

पड़ी रही । बड़े सबेरे मेरा बाप सड़क पर झाड़ू देता उधर से निकला और उसे घर में डाल लिया । इसीलिए तो मैं ने कुछ भलेमानसों सी रङ्गत पाई है । लेकिन कालू कौए के गले मुझ लोटन कबूतरी को बाँध कर मेरे बाप ने अच्छा नहीं किया । उस मुये को मेरी चढ़ती जवानी पर ज़रा भी तरस नहीं ! क्या करूँ ! तो क्या फिर कोठे ही पर चल दूँ ? लेकिन नहीं । उन लोगों की ज़िन्दगी भी किसी काम की नहीं । वेश्या वह तालाब है जिसमें सिर्फ़ भले आदमी ही नहीं, कौए-कुत्ते तक भी मुँह लगा जाते हैं, वेश्या वह नाव है जिस पर नंगे-लुच्चे सभी सवारी कर सकते हैं, वेश्या वह लता है जिसका रस चूसने में विषैले कीड़े भी अपना हक़ समझा करते हैं । मैं वेश्या न बनूँगी, वेश्या का आलम सिर्फ़ दस साल का है—१५ से २५ की उम्र तक ! मैं तो ज़िन्दगी भर सुख भोगना चाहती हूँ और वह भी अपनी मरज़ी के मुताबिक । इसीलिए मैं मनचाहा मर्द ढूढ़ूँगी और उसके साथ अपनी ज़िन्दगी बिताऊँगी । यह भी रास्ता ख़राब और ख़तरनाक है, लेकिन क्या करूँ, जवानी का जोश बेक़ाबू हो रहा है—आपे से बाहर हो रहा है ।

[टोकनी और झाड़ू ज़मीन पर रख कर गाती है ।]

धुन पीलू—ताल खेमटा

नयी उठती जवानी ग़ज़ब करती है,
कैसे रोकूँगी जोबन के ज़ोर को॥
ये जवानी मस्तानी— कैसे०—
दिलो जिगर में नया इन्क़िलाब आया है।
कि शाहे हुस्न इधर बेनक़ाब आया है॥
नये ही जोश से रग रग फड़क के कहती है।
निगाहे शौक़ ! सँभलना शबाब आया है॥
कैसे रक्खूँगी०—

चौपटचंद

[गाता हुआ और जान-बूझ कर बुधिया से निगाहें हटा कर रखता हुआ आता है]

धुन पीलू—ताल खेमटा

प्यारी प्यारी जवानी न ख़ाली रहेगी,
तुझे सैंया से जाके मिलाऊँगा॥
ये जवानी दिलजानी—तुझे सैंया०—
मुझे भी इश्क़ का कुछ आज ख्वाब आया है।
कि ज़ेर साया ये ख़ादिम जनाब आया है॥

मचल रही है फिसलने को तबयीत मेरी।
हुज़ूर में अगर हुस्नो शबाब आया है॥
तुझे सैंया से जाके०—

बुधिया

[गम्भीर होकर]
आप कौन हैं ?

चौप चन्द

[उस तरफ़ देख कर, मानों पहिले पहल ही देखा हो]
अच्छा ! माफ़ कीजियेगा, आप कौन हैं ?

बुधिया

पहले आप कहिये।

चौपटचंद

[ज़रा झुक कर]
पहिले आप ही कह दीजिये।

बुधिया

मैं जानना चाहती हूँ कि क्या आप कालूसिंह की तरफ़ से आये हैं।

चौपटचंद

जी नहीं, मैं सेठ बुद्धूमल की तरफ़ से आया हूँ।

बुधिया

कौन बुद्धूमल और उनका क्या पैग़ाम है ?

चौपटचन्द

वे कई लाख के धनी हैं। आगे-पीछे कोई नहीं ! एक नयी-नवेली नारी को सेठानी बनाना चाहते हैं।

बुधिया

[खुश हो कर]

तो क्या तुम मुझे सेठानी बनाना चाहते हो ?

चौपटचन्द

[उछल कर]

अन्धे के हाथ बटेर! अन्धे के हाथ बटेर! घर बैठे लक्ष्मी आई। मैंने तो अन्धेरे में ढेला मारा था लेकिन निशाना एकदम ठीक लगा।

बुधिया

[लज्जित होकर]

तो क्या तुम मुझ से मज़ाक कर रहे हो?

चौपटचन्द

[गंभीर होकर]

जी नहीं! बिलकुल नहीं! मैं और मज़ाक! वह मुझ से कोसों दूर है। अपनी बात याद रखना जानी! भूल न जाना। तुम पूछती हो, 'क्या मुझे सेठानी बनाना चाहते हो?' हाँ, बिलकुल मैं ही तुमको अपनी सेठानी बनाना चाहता हूँ। उस खूसट बुड्ढे से तो सिर्फ़ धन ऐंठना है। उससे नहीं, बल्कि उसके धन से तुम्हारा ब्याह कराऊँगा

और मज़े उड़ाऊँगा मैं ! फिर हम-तुम दोनों मौज की ज़िन्दगी वितायेंगे। मैं ज़ाहिर में तुम्हारा बाप और बातिन में...

[आँखें मटका कर]

वही बनूँगा। यह सिर्फ़ उस बुड्ढे की ज़िन्दगी तक है जो क़ब्र में पैर लटकाए बैठा है। उसके बाद तो फिर हम दोनों खुल कर खेलेंगे।

बुधिया

हे भगवान्, यह मैं क्या सुन रही हूँ ! इतना बड़ा फ़रेब !

चौपटचन्द

[बुधिया का हाथ अपने ओठों तक ले जाकर चूम लेता है।]

प्रेम के मैदान में सब फ़रेब जायज़ है प्यारी !

बुधिया

हैं, हैं, यह क्या है ?

चौपटचन्द

प्रेम की पहिली मुहर छाप।

बुधिया

छोड़ो, छोड़ो। मेरा मन कैसा हुआ जा रहा है। कितना मधुर, कितना कोमल ! परन्तु नहीं; ज़रा ठहरो, मुझे

सोच लेने दो। तुम ठग हो, मुझ को स्वर्ग दिखा कर नरक में ढकेलोगे।

चौपटचन्द

प्यारी, जैसी चाहे वैसी क़सम ले लो।

बुधिया

तो सच ही तुम मेरे होगे ?

चौपटचन्द

[गले में हाथ डाल कर]

बस, हो चुका।

बुधिया

[चौपट का हाथ हटा कर]

ठहरो, मैं तो भंगिन हूँ।

चौपटचन्द

[चौंक कर]

हैं, भंगिन !

बुधिया

[आग्रहपूर्वक]

लेकिन मेरी माँ सेठानी थी।

चौपटचन्द

[कुछ ठहर कर— सहसा]

उहँ! कोई मुज़ायक़ा नहीं। रूपवती नवेलियाँ इस दुनियाँ की चीजें नहीं। वे सदा पवित्र हैं। "जात-पाँत पूछै ना कोई, हरि का भजै सो हरि का होई।" सब ही हरि के जन हैं। इसलिये सब एक बराबर हैं। प्यारी तुम भंगिन भी हो तो क्या हुआ, तुम्हारा यह रूप तो भंगी नहीं है!

बुधिया

तो फिर चलो प्यारे चलें, बुड्ढे बुद्धू की हजामत करके हमलोग मौज उड़ायें।

चौपटचन्द

लेकिन तुम्हारे घर वाले गड़बड़ तो न करेंगे!

बुधिया

मेरे घर में है ही कौन ? मर्द भाग गया। माँ-बाप मर गये ! भौजाई को मैं फूटी आँखों भी नहीं सुहाती। वह तो मुझे 'चमकुल मटकुल' ही कहा करती है। भाई समझेगा कि मैंने भाग कर कहीं घर कर लिया और बस, फिर मेरा ख्याल ही भूल जायगा।

चौपटचन्द

तब तो पौ बारह हैं।

[हाथ में हाथ मिला कर]

चलो मेरी जान !

[अङ्गरेज़ी डान्स के ढंग पर क़दम उठाते हुए दोनों उछलते गाते जाते हैं:—]

धुन भीमपलासी—ताल खेमटा

चौपटचन्द

कहो कैसी बहार है !

बुधिया

बड़ी मज़ेदार है।

चौपटचन्द

बुड्ढे का प्यार है, बुद्धू को बुद्धू बनायें...

मेरी जान !

बुधिया

है ख़बीस,

चौपटचन्द

डबल फ़ीस, .ख़ूब है बख़शीस।

बुधिया

.ख़ूब लूटेंगे माल......

चौपटचन्द

चल के चाल

लें निकाल माल-टाल।

बुधिया

ख़ूब आयेगा रङ्ग,

चौपटचन्द

होगी पूरी उमङ्ग।

बुधिया

है खबीस,

चौपटचन्द

डबल फ़ीस, ख़ूब है बख़शीस ।

[कहो कैसी बहार है, इत्यादि दुहराते हुए दोनों उछलते-कूदते जाते हैं । परदा उठता है ।]

छठाँ दृश्य

[स्थान—उज्जैन, राज-वाटिका का दरवाज़ा]

[चन्द्रसिंह और मणिसिंह आते हैं ।]

मणिसिंह

प्यारे युवराज ! यह उज्जैन के महाराज की वाटिका है । देखिये, कितनी सुन्दर है !

चन्द्रसिंह

भाई मणिसिंह ! यह तो सचमुच ही आकर्षक है । इसके मनोरम फूल तो देखिये—

वर्षा ने कैसी बढ़-बढ़ कर मधुराई ढाली फूलों में ।
आँखों ने मधु से भरी हुई पाई है प्याली फूलों में ॥
जग का अनुराग-रङ्ग पाकर आई क्या लाली फूलों में ।
नभ के तारों से भी बढ़ कर है छटा निराली फूलों में ॥
पाई है सुख के मन्दिर की इस मन ने ताली फूलों में ।
तरु और लता की मिलती हैं आँखें मतवाली फूलों में ॥
यह शान्ति कान्ति किस माली ने यों लाकर पाली फूलों में ।
मन मार मार रह जाती है चिन्ता की व्याली फूलों में ॥

भाई मणि ! इन फूलों को देख कर तो मेरी थकावट और मेरी चिन्तायें सब दूर हो गईं ।

मणिसिंह

[दरवाज़े की ओर ग़ौर से देख कर]

अरे ! यहाँ तो कुछ लिखा हुआ है । देखूँ !

[नज़दीक जाकर]

आहा ! यहाँ तो "चन्द्रकान्ता" लिखा हुआ है ! ताज़े अक्षर हैं । मानों आज ही किसी ने लिखा है । कितना प्यारा नाम है, भाई चन्द्र ! इस "चन्द्रकान्ता" में ज़रूर कुछ तिलस्म छिपा हुआ है । जान पड़ता है, विधाता ने आपकी जोड़ी यहीं तैयार की है । चलिये, भीतर चल कर इस तिलस्म को तोड़ने का प्रयत्न करें ।

चन्द्रसिंह

तुम तो अपने मज़ाक से बाज़ नहीं आते । हर मौक़े की दिल्लगी अच्छी नहीं होती ।

[परदे के भीतर से गाने की आवाज़ आती है—
"फूला फूलै बारी-बारी, सजनी, मैं बलिहारी ना ।]

मणिसिंह

वह लो ! वहाँ तो जान पड़ता है, इन्द्रसभा लगी हुई है । तब तो ज़रूर ज़रूर ही भीतर चलना चाहिये ।

चन्द्रसिंह

लड़कियाँ झूल रही होंगी। वहाँ इस प्रकार पहुँच जाना एकदम अशिष्टता है, अभद्र अन्याय है ।

मणिसिंह

रहने भी दो अपना अभद्र अन्याय ! हम लोग जगत की गति देखने निकले हैं कि विधि-निषेध की मीमांसा करने, चलिये भी ! बादल उठ रहे हैं, पानी बरसना ही चाहता है । यहाँ पनाह भी न मिलेगी । कह देंगे कि पानी के डर से आ गये । वे लोग बहुत रूखी हो जायँगी तो हम लोग क्षमा माँगते हुए चुपचाप चल देंगे । यहाँ इस समय कोई पहरेदार भी तो नहीं है । जान पड़ता है कि जान-बूझ कर सब हटा दिये गये हैं । फिर अब अवसर चूकना सरासर मूर्खता है ।

चन्द्रसिंह

नहीं, मुझे क्षमा कीजिये मित्र !

मणिसिंह

अजी चलिये भी।

[उन्हें घसीटता हुआ नेपथ्य की ओर ले जाता है]

[परदा उठता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—राजवाटिका, प्रभा फूलों के झूले पर बैठी झूल रही है। कमला और विमला उसे झुला रही हैं। विभा सामने खड़ी है । कमला और विमला वही गाना गा रही हैं।]

कजरी–ताल दादरा

बैठी महामोद मदमाती प्यारी अति सुखकारी ना।
झूला झूलै बारी-वारी सजनी ! मैं बलिहारी ना !
चन्दन पटुली रेशम डोरैं फूलन-वारी ना।
ऊपर छाई रे बादरिया रस-भरी कारी कारी ना ॥

विभा

वाह, कैसी बहार है !

[पीछे से चन्द्र और मणि आते हैं और चुपचाप एक ओर छिप कर खड़े हो जाते हैं।]

मणिसिंह

कहिये मित्र ! क्या हाल है ! देखा, उस झूले पर बैठी हुई उर्वशी को !

चन्द्रसिंह

[मुस्कुरा कर]

लेकिन भाई साहब ! आपकी निगाहें तो उस ज़मीन पर खड़ी हुई—

[विभा को बता कर]

रम्भा पर चिपकी जा रही हैं।

मणिसिंह

[झेंपता हुआ]

अख़्ख़ाह ! अब आपने भी इस मैदान पर पैर रक्खा ! बस, फिर तो अब अपनी फ़तह है !

चंद्रसिंह

[प्रकृतिस्थ होकर]

नहीं नहीं ! किसी की बहू-बेटियों पर इस तरह की टीकाएँ करना शिष्टजनों को शोभा नहीं देता। बस, मित्र ! चलो, चलें ! अब यहाँ ठहरना न चाहिये।

मणिसिंह

क्यों चलें ! ज़रा मेरे कौतूहल की शान्ति तो हो लेने दो। मैं देखना चाहता हूँ कि वे लोग यहाँ क्या क्या करती

हैं। हम लोगों का मन कुछ बिगड़ा थोड़े ही जाता है। ज़रा दुनियाँ के रङ्ग तो देखिये।

चंद्रसिंह

न जाने क्यों आज मेरे भी पैर यहाँ से उठना नहीं चाहते। अच्छा, ईश्वर-दत्त सौन्दर्य्य को एक बार ध्यान-पूर्वक देख लेने में क्या हर्ज है! मन तो अपना है ही, वह भाग कर जा ही कहाँ सकता है?

मणिसिंह

यही तो मैं भी कहता हूँ। तो फिर बस, अब चुपचाप बहार देखते जाइये। अधिक बातचीत करने से शायद वे लोग हमें देख लें।

[दोनों चुप हो जाते हैं।]

कमला

इस तरह अकेली झूलने में क्या आनन्द!

प्रभा

तो फिर!

कमला

जिस तरह झूले की पटली दो डोरों से बँधी हुई रहती है, उसी तरह झूलने वाले का आनन्द भी दो हृदयों से बँधा हुआ रहना चाहिये।

प्रभा

[मुस्कुरा कर]

तो तू भी आ बैठ !

विमला

लेकिन राजकुमारी ! स्त्री के साथ स्त्री बैठी तो क्या आनन्द !

विभा

बस, बस ! फिर वही बातें ! अरी निगोड़ी, क्या तुझे "प्यारे-प्यारी" के सिवा और कोई बातें ही नहीं सूझतीं !

विमला

सूझती क्यों नहीं विभा बहन ! लेकिन उम्र का तकाज़ा भी तो एक चीज़ है। इस उम्र में ये ही बातें बड़ी मीठी लगती हैं।

विभा

लेकिन मेरे मन में तो कभी ये बातें नहीं आतीं !

कमला

जब आवेंगी तब छप्पर फाड़ कर !

विभा

चल हट !

[ज़रा व्यंग से मुँह फेर लेती है।]

प्रभा

दिल जानता होगा विभा ! सच कहना, क्या यह "हट" दिल से निकली है ?

विमला

[विभा के गले लग कर]

क्यों बहन, रूठ गईं ?

विभा

नहीं नहीं, मैं क्यों रूठने लगी ! जब बहिन प्रभावती को तुम्हारी ये बातें पसन्द हैं तो यही सिलसिला जारी रक्खो।

प्रभा

आ बहिन विभा ! तू भी मेरे साथ झूल।

विभा

नहीं, मैं यहीं अच्छी हूँ। आप अपनी इन नयी-नवेली सखियों में से किसी एक को साथ ले लीजिये।

कमला

अच्छा तो मैं ही आती हूँ और देखिये, झूले पर बैठ कर एक कैसा चटपटा गाना सुनाती हूँ।

[झूले पर बैठ कर प्रभावती से]

समझ लीजिए कि आप 'प्यारे' हैं और मैं 'प्यारी' हूँ। अब सुनिये:—

धुन गारा—ताल दादरा

कमरिया लचकै रे सैंया, झूला धीरे-धीरे झूल।
लरजै जियरा पैंग न मारो, रसरिया तरकै रे, सैंया०—
कारी बदरिया घिरि घिरि गरजै, बिजुरिया चमकै रे, सैंया०—
कर जोरे मैं बिनती करत हौं, नजरिया छलकै रे, सैंया०—

[हाव-भाव और नाज़-नख़रे दिखाती है]

प्रभा

वाह सखी, तू ने तो कमाल कर दिया! तेरा गाना सुन कर तो सचमुच ही मैं "प्यारे" बनी जा रही हूँ और तुझे "प्यारी" कह कर छाती से लगा लेने की तबीयत हो रही है।

कमला

तो फिर देर क्यों हो!

[नखरे के साथ "प्यारे" कह कर प्रभा के गले में अपने हाथ डाल देती है, प्रभा भी "प्यारी" कहती हुई उससे लिपट जाती है। विमला सीटी बजाती है।]

विभा

यह क्या है ?

विमला

आनन्द का उल्लास !

[विमला विभा के सामने आकर मुस्कराती हुई खड़ी हो जाती है, और उसकी ठोढ़ी पकड़ लेती है। विभा, सहसा झाड़ी के पीछे से एक दस्यु को आता देख, चौंकती है।]

विभा

[तेज़ी से]

हैं ! वह पुरुष कौन ?

[प्रभा चौंक कर कमला से अपने हाथ हटा लेती है, कमला उसे झोंका देकर दस्यु की ओर ढकेलती है ! दस्यु झट उसे उठा-कर ले भागता है।]

विभा

[चिल्ला कर]

धोखा ! धोखा ! ठहर, ठहर, ओ नीच !

[दौड़ना चाहती है ।]

विमला

[उसकी राह रोक कर]

दौड़ो-दौड़ो, बचाओ-बचाओ !

[विभा और विमला का धक्कमधक्का ।]

चन्द्रसिंह

[शीघ्रता से तलवार निकाल कर दौड़ते हैं]
ठहर, ठहर, ओ नीच ! कहाँ जाता है ?

[नेपथ्य से चार-पाँच डाकू निकल पड़ते हैं और चन्द्रसिंह से लड़ने लगते हैं । मणि मदद के लिये दौड़ते हैं, इतने में एक डाकू विमला के इशारे से विभा की ओर झपटता है ।]

विभा

[भय से कातर होकर]

हाय मुझे कोई बचाओ, मैं मरी !

[मणिसिंह लौट आते हैं और डाकू को मार भगाते हैं। चन्द्रसिंह इतने में डाकुओं का पीछा करते करते बाहर निकल जाते हैं।]

विमला और कमला

[यह सब दृश्य देख, घबराई-सी हो कर]

हा ! ये दुष्ट कौन हैं और यहाँ कैसे आ पहुँचे ! बस, अब भागो भागो।

[भाग जाती हैं।]

विभा

[मणि से]

असमय के सहायक देवदूत ! आप कौन हैं ? हा ! जिस तरह मुझे बचाया उसी तरह मेरी सखी राजकुमारी को भी बचाइये।

मणिसिंह

न घबराओ सुन्दरी ! कन्नौज के राजकुमार चन्द्रसिंह उन्हें बचाने गये हैं। मैं उनका मित्र मणिसिंह हूँ, मैं भी जाता हूँ।

[जाना चाहते हैं कि चन्द्रसिंह आते हैं।]

चन्द्रसिंह

[ख़ून से लथपथ थके हुए से]

डाकू बारह थे और मैं अकेला। दस को ख़त्म कर चुका। फिर भी दो दुष्ट राजकुमारी को ले ही गये। मेरी आँखों के सामने यह अन्धेर ! बस, अब जब तक उसे न छुड़ा लूँगा, कहीं विश्राम न लूँगा।

[मणि को सम्बोधन कर]

चलो मित्र ! चलें, एकदम पीछा करें।

[मणि को लेकर सवेग चल देते हैं।]

[बादल गड़गड़ाता है। बिजली गिरती और झूले को तोड़ती चली जाती है। विभावती के मुँह से "आह" निकलती और वह बेहोश होकर गिर जाती है। पानी बरसने लगता है।]

[सामने का परदा गिरता है।]

अङ्क २

दृश्य पहला

[स्थान—निर्जन वन-प्रान्त—ऊसर ।
चन्द्र और मणि थके-से खड़े हैं ।]

चन्द्रसिंह

भाई मणि ! कहीं पता न लगा । मैं एकदम निश्चय के साथ कह सकता हूँ कि मैंने उन दोनों डाकुओं को यहाँ तक भागते देखा था । यहीं कहीं वे एकाएक ग़ायब हो गये । आसमान उठा ले गया ! ज़मीन खा गई ! गुटका निगल कर वे अदृश्य हो गये ! कुछ समझ में ही नहीं आता कि क्या हो गया ! मेरा मन बोलता है कि वे निश्चय ही यहीं कहीं होंगे; परन्तु समझ में नहीं आता कि वे हैं कहाँ और गये कहाँ !

मणिसिंह

यही तो आश्चर्य है । बेचारी राजकुमारी ! आह ! विधाता, ऐसे सुकुमार जीव को भी कहीं इस तरह दण्ड

दिया जाता है ! जिसने शायद कभी ज़िन्दगी में दुख का नाम तक न सुना होगा, उसका इस निर्दयता से अपहरण !

लुटेरे लूटते-खाते बड़ी ख़ुशियाँ मनाते हैं,
अबल दुख में पड़े रोते अहो ! आँसू बहाते हैं।
अधर्मी ऐशो-इशरत में प्रभो ! जीवन बिताते हैं,
जो सच्चे साधु हैं बस ठोकरें दर-दर की खाते हैं।
समझ पड़ता न हमको रास्ता कुछ हाय ! है तेरा,
विधाता ! सच बता देना यही क्या न्याय है तेरा !

चन्द्रसिंह

भाई मणि ! मुझे भी विधाता का रास्ता कुछ समझ में नहीं आता। देखो तो, कहते हैं कि वह बड़ा न्यायी है और जो कुछ वह करता है, संसार की भलाई के लिये। लेकिन तुम्हीं कहो, गुलाब में काँटे लगा कर, कमल को गहरे जल के अन्दर कीचड़ में फँसा कर, प्यार से पास बुलाने वाली नदियों में दलदल के जाल बिछा कर, उसने संसार की कौन सी भलाई की है ? उसने अगर फूल खिलाये तो उनको सिर्फ़ दो दिन की ज़िन्दगी क्यों दी ! उसने अगर कोमल कण्ठवाली कोकिलाएँ बनाईं तो बहेलियों के मन में

उन्हें जाल में फँसा लेने की बुद्धि ही क्यों दे दी ? उसने अगर हीरे और मोती बनाये तो उन्हें इस तरह गाड़कर और छिपा कर क्यों रख दिया ? परन्तु नहीं मित्र ! यह हमारी भूल है। हमारी समझ का दायरा बहुत छोटा है। हम उसकी दूरन्देशी का अन्दाज़ा भी नहीं लगा सकते। उसके हर एक काम में कुछ न कुछ अद्भुत रहस्य छिपा रहता है। यदि हम उस रहस्य को नहीं समझ पाते तो यह हमारी कमज़ोरी है। हमें अधिकार नहीं कि हम इस तरह ईश्वर की आलोचना करें।

न हो दुख तो भला सुख से न क्या जी ऊब जायेगा ?
विरह यदि हो न फिर तो प्रेम में क्या लुत्फ़ आयेगा ?
सितमगर हो न दुनियाँ में रहम क्या नाम पायेगा ?
न हो जो रात तो दिन किस तरह जलवा दिखायेगा ?
विधाता के नियम ऐसे अगर हम ख़म समझते हैं,
तो सच्ची बात यह है बस उन्हें हम कम समझते हैं ?

मणिसिंह

ठीक है भाई चन्द्र ! तुम्हारा कहना ठीक है, लेकिन क्या किया जाय ! जब दिल जलता है तब इसी तरह भली-बुरी बातें मुँह से निकलती हैं।

चन्द्रसिंह

इन बातों से कोई फ़ायदा नहीं मित्र ! उदास होकर उपायों से मुँह मोड़ बैठना तो ठीक नहीं ! कोई रास्ता सोचो ।

मणिसिंह

इस ऊसर ने सब रास्ते रोक दिये। बुद्धि आगे बढ़ने के लिये कोई रास्ता ही नहीं पा रही है । अब तो बेहतर यही है कि बस्ती की ओर चलें। वहीं स्थिर होकर कोई रास्ता ढूँढ़ेंगे।

चन्द्रसिंह

यह जगह जानी-पहिचानी नहीं है, बस्ती में जायँ भी तो कहाँ जायँ ! मेरे पैर न जाने क्यों यहीं गड़े रहना चाहते हैं। इसलिये तुम अकेले जाओ ! बस्ती में ठीक-ठाक करके मुझे लिवा ले जाना। तब तक मुझे यहीं रहने दो ! दिमाग़ जब अकेला रहता है तब उसकी मदद के लिये अच्छे-अच्छे विचार आप ही आप दौड़ कर पास आ जाते हैं।

मणिसिंह

[कुछ सोचकर]

अच्छा यही सही ! मैं जाता हूँ और ठहरने का सब इन्तज़ाम ठीक कर बहुत जल्द वापिस आता हूँ।

[जाता है।]

चन्द्रसिंह

[अकेले टहलते हुए]

क्या मेरा मन मुझे धोखा देगा ? फिर क्यों उसकी तरफ़ खिंचता चला जा रहा है ? सिर्फ़ एक ही बार तो मैंने उसे आँख भर कर देखा था। इतने ही में उसने दिल पर इतना गहरा असर कर दिया।

अजब सा हाल बेढब हो रहा है इस दफ़ा मेरा !
कहाँ हिम्मत गई मेरी कहाँ वह फ़िलसफ़ा मेरा !
प्रभा ने एक जल्वे में दिया वह इश्क़ का सौदा !
हुआ उल्फ़त में पड़कर दिल मुझी से बेवफ़ा मेरा ॥

मैं उसकी मोहिनी मूर्ति को बार बार हटाता हूँ लेकिन हर बार सोते-जागते वह ज़बरन् इठलाती हुई मेरी आँखों

के सामने आ ही पहुँचती है। मैं बिना पूछे उसके बगीचे में गया था, वह बिना पूछे मेरे दिल के महल में आ पहुँची! मैं तो थोड़ी ही देर में उसके बग़ीचे से हट गया, लेकिन वह तो हटाये हटती ही नहीं। मणिसिंह तुम ने बुरा किया जो मुझे उस उद्यान में ले गये! मैं क्या से क्या हो गया! उफ़, जिस बात को डर रहा था, वही हो गयी। कहाँ गईं मेरी प्रतिज्ञायें। पिता जी इस वक़्त मेरे दिल का हाल देखें तो क्या कहेंगे! नहीं, नहीं, मैं इतना कमज़ोर नहीं। मैं जरूर ही अपने मन को जीतूँगा। बस, रूप के नशे! तू भाग! मुझे न तो ऐसा प्रेम चाहिये और न ऐसे प्रेम का फल! बस, चलूँ।

[जाने लगते हैं परन्तु फिर कुछ सोच कर रुकते हैं]

लेकिन नहीं, एक अबला को अपने सामने इस तरह विपद्-जाल में फँसते देख मैं किस तरह मुँह मोड़ लूँ। मैं क्षत्रिय हूँ। मेरा धर्म है कि मैं उसको आफ़त से बचाऊँ। एक बार उसको छुड़ा दूँ, फिर उससे कोई सम्बन्ध न रखूँगा। लेकिन, छुड़ाऊँ तो कैसे छुड़ाऊँ? दिल कहता है कि रास्ता यहीं मिलेगा! लेकिन कब और कैसे, यह समझ में नहीं आता! तो फिर खड़े खड़े क्या करूँ? ओफ़, फिर

उसका मतवाला रूप आँखों के सामने झलक उठा। बिजली-सी दौड़ गई।

नशीले हुस्न! तुम कैसा नशीला वार करते हो!
कि पल में प्रेमियों का बस नया संसार करते हो!
किसी को हिज्र की आहों से तुम बेज़ार करते हो!
किसी के दिल में पैदा वस्ल का गुलज़ार करते हो!
ख़ुदा के नूर से रौशन तुम्हारा ही उजाला है!
ज़माने में हमेशा ही तुम्हारा बोलबाला है!

[प्रभावती की चीख़ सुनाई पड़ती है।]

ऐं, यह क्या? उसी की आवाज़! मैं लाखों बोलियों में यह आवाज़ पहिचान सकता हूँ। ठीक वैसी ही आवाज़, जैसी उस बाग़ीचे में गिरफ़ारी के समय सुनी थी।

[फिर आवाज़]

बस, बस, वही है। वही है। ओफ़, उस ख़ंदक से आवाज़ आ रही है। चलूँ, भागूँ, देखूँ।

[सवेग प्रस्थान]

[परदा उठता है।]

———

दूसरा दृश्य

[डाकुओं का अड्डा। खूब लम्बी-चौड़ी खोह में सजी हुई बढ़िया कुर्सियाँ आदि रखी हैं। सहमी हुई प्रभा खड़ी है। सामने डाकू-सरदार बातचीत कर रहा है।]

कालूसिंह

तुम सुन चुकी हो कि मालवा-नरेश अजितसिंह के कहने से ही मैं तुम्हें उठा लाया हूँ। लेकिन अजित नीच है, मैं बहादुर हूँ। उसके पास रह कर तुम्हें सुख न होगा; मेरे पास रहने से तुम तिलस्म की रानी बनी रहोगी। इसीलिये मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी हो जाओ। तुम समझती होगी कि मैं डाकू हूँ, लेकिन इस दुनियाँ में डाकू कौन नहीं है? राजा तरह तरह के टैक्स लगा कर प्रजा के माल पर डाका डालते हैं। प्रजा साहूकार बन कर कर्जदारों और किसान बन कर बेचारे बैलों पर डाका डालती है। बैल फलते-फूलते पौधों और हरी-भरी घास की कोपलों पर डाका डालते हैं। तुम समझती होगी कि मैं क्षत्रिय नहीं, लेकिन मैंने बड़े बड़े तलवार-बहादुर कहाने वाले क्षत्रियों

को अपनी तलवार के आगे सूखी घास की तरह काँपते देखा है। फिर मैं किस तरह क्षत्रिय नहीं! जाति कर्म से है न कि जन्म से? क्या तलवार के बल पर राज जमाने वाले हूण और शक लोग क्षत्रिय थे? फिर आज किस तरह वे क्षत्रियों में शामिल हो गये? मैं पढ़ा-लिखा और बहादुर हूँ, मैं भी राज जमा कर राजपूत कहा सकता हूँ। तुम समझती होगी कि मैं काला और कुरूप हूँ, लेकिन रूप तो स्त्री की शोभा है। पुरुष की शोभा उसकी वीरता में है न कि उसके रूप में।

प्रभा

[तन कर]

डाकू सरदार! बहादुरी और तिलस्म के अधिकार से ही कोई बड़ा नहीं हो जाता। क्रूर बाघ और भालू भी बहादुर रहा करते हैं तथा तिलस्माती खोहों के भी अधिकारी रहा करते हैं लेकिन हर कोई उन्हें गोलियों का शिकार ही बनाता है। तुम डाकू हो इसलिये तुम दुनियाँ को अपने ही रङ्ग में देख रहे हो। अगर तुम में कुछ विवेक होता तो तुम समझते कि न्याय की जबरदस्त सत्ता के डर से डाका इसी तरह खोहों में छिपा पड़ा रहता है।

तुम कुरूप और नीच होकर भी क्षत्रिय बनने का दावा और एक राजकुमारी के पति बनने की अभिलाषा करते हो? तुम्हारी इस मूर्खता पर मुझे अफ़सोस हो रहा है। क्या तुम्हें नहीं मालूम कि कौवा कितना भी गुणवान् रहे फिर भी वह कौवा ही रहेगा ? हंसिनी का हृदय वह कभी नहीं पा सकता।

कालू

[कुछ सोचता हुआ]

हूँ हूँ, यह ! अच्छा, कोई चिन्ता नहीं। अभी नहीं तो कुछ दिन और सही। यहाँ तुम्हें किसी बात का कष्ट तो नहीं है राजकुमारी !

प्रभा

सोने के पिंजड़े में चिड़िया को क्या कोई कष्ट रहता है? कसाई के यहाँ हरी घास खाने वाले बकरे को क्या किसी बात का कष्ट रहता है ? कुत्सित वेश्या के फन्दे में फँसी हुई अबोध अबला को क्या किसी बात का कष्ट होता है ? तुम अपने को पढ़ा-लिखा होशियार कहते हो, फिर मुझसे ऐसी बात क्यों पूछते हो ?

कालू

तो विवश होकर मैं तुम्हें अजितसिंह के पास पहुँचा दूँगा।

प्रभा

मैं कड़ाही से निकल कर चूल्हे में नहीं गिरना चाहती।

कालू

तो फिर मुझे स्वीकार ही क्यों नहीं कर लेती?

[आगे बढ़कर प्रेम जताता हुआ हाथ पकड़ने की चेष्टा करता है। प्रभा क्रोध से हाथ झटक देती है।]

प्रभा

बस नीच! ख़बरदार! शरीर पर हाथ न लगाना, नहीं तो ईश्वर का शाप अभी तेरे ऊपर गिरेगा।

कालू

ईश्वर! (हँस कर) हँ! हँ! हँ! हँ! ईश्वर क्या है, और कहाँ है? नादान, राजकुमारी! ईश्वर था ही नहीं

और वह अगर था तो अब मर चुका। जो कुछ है सो मनुष्य है और मनुष्य की शक्ति है। इस संसार में जिसकी लाठी उसकी भैंस !

प्रभा

[आश्चर्य से]

तुम नास्तिक हो ? तुम ईश्वर को भी असत्य मानते हो ? ऐसा न कहो। तुम्हारी जीभ गिर जायगी।

कालू

[व्यङ्ग से]

वाह री ईश्वर की भक्तिन ! तुम सरासर देख रही हो कि मैं ईश्वर को न मानते हुए भी तुम्हें अपनी गिरफ़ में ले आ सका और तुम ईश्वर-ईश्वर करती हुई भी यहाँ आ फसीं।

प्रभा

लेकिन क्या वह ईश्वरीय सहायता नहीं थी जो एक अपरिचित वीर युवक इस तरह उस बगीचे से निकल

पड़ा और अकेले ही तुम्हारे दस आदमियों को साफ़ कर चुका !

कालू

फिर तुमने उसकी याद दिलाई ! ओफ़ उसका नाम सुनते ही मेरा ख़ून उबल पड़ता है। मैंने सुना है कि वह कन्नौज का राजकुमार था। मैं अब कन्नौज ही में डाका डालने वाला हूँ। वहाँ उससे ज़रूर ही अपने साथियों का बदला लूँगा।

प्रभा

बेरहम डाकू ! तुझे चाहिये था कि तू उसकी बहादुरी की तारीफ़ करता। मैंने उसकी बहादुरी के हाथ देखे हैं। उस ईश्वरीय दूत को तू क्या, तेरी समूची सेना भी किसी तरह नुक़सान नहीं पहुँचा सकती।

कालू

बस, बस, छोकरी ! बहुत बढ़-बढ़ कर बातें न कर। तू ने अभी कालू सरदार का गुस्सा नहीं देखा है।

प्रभा

तो क्या करोगे ? मार ही डालोगे, यही न ? मैं उसके लिये तैयार हूँ।

कालू

मैं उससे भी कड़ी सज़ा दे सकता हूँ। मैं इज्ज़त बरबाद कर सकता हूँ।

प्रभा

मैं उसके पहिले ही अपने प्राणों को अपनी देह से जुदा कर सकती हूँ।

कालू

[झपट कर हाथ पकड़ता हुआ।]

देखूँ, तू क्या करती है ?

प्रभा

[हाथ छुड़ाने की चेष्टा करती हुई।]

हा भगवान ! अबला की इज्ज़त !.........

चन्द्र

[स्टेज के पीछे से झपटते हुए आगे बढ़ते हैं ।]

कौन है दुष्ट ! ठहर, मैं आया ?

[सहसा भालों के दरवाज़े चारों तरफ़ से निकल कर उन्हें घेर लेते हैं और वे गिरफ़्तार हो जाते हैं ।]

कालू

[जो प्रभा का हाथ छोड़ चुका था, चन्द्र को देख कर हँसता है ।]

अहा हा ! शिकार ख़ुद ही माँद में आ पहुँचा । अच्छा ! अच्छा ! अब मैंने समझा कि ईश्वर अगर है तो वह डाकुओं का मददगार है ।

[प्रभा को देख कर]

तुझ-सरीखी छोकरियों का नहीं ।

प्रभा

[चन्द्र को देखकर]

भगवन् ! यह कैसा अन्धेर ! हाय !

[बेहोश हो कर गिरती है]

कालू

[कुछ सोच कर]

अच्छा, यह तो अच्छा नुस्खा हाथ लगा। अब इस युवक के नाम की गोलियाँ दे-देकर प्रभा की गरमी उतारूँगा। तब तक इसे ज़िन्दा रहने दूँ।

[चन्द्रसिंह भालों की दीवार पर तलवार का वार करते हैं। तलवार की ठोकर लगते ही वहाँ से बिजली चमक उठती है और पिस्तौल का-सा धड़ाका होता है। चन्द्रसिंह काँप कर "आह" करते हुए गिर पड़ते हैं और कालू ठहाका मार कर हँस उठता है]

[परदा गिरता है।]

दृश्य तीसरा

[सेठ बुद्धूमल का बैठकखाना]

बुद्धूमल

[बड़े शीशे के सामने खड़ा हो कर]

थैला, ओ बे थैला !

थैला

[आकर]

आया सरकार !

बुद्धू

उस हरामज़ादे नाई को बुला ला। इसी तरह डाढ़ी बनाई जाती है? चींटियों के अण्डों की तरह सफ़ेद खूँटियाँ अब भी चमड़े पर बिखरी पड़ी हैं।

थैला

अभी लाया सरकार !

[भागता जाता है]

बुद्धू

[फिर शीशे के पास जाकर]

मेरा ब्याह होने वाला है, ब्याह ! शीशे ! क्या तू भी मुझसे रश्क करता है ? अरे मुझको चिढ़ाता क्यों है बेवकूफ़, मैं ग़ुस्से में आऊँगा तो तुझे फोड़-फाड़ डालूँगा।

[थैला नाई को लेकर आता है।]

बुद्धू

क्यों जी हज्जाम ! दो पैसे क्या मुफ़्त के आते हैं ? डाढ़ी में चीटियों के अण्डे छोड़ दिये !

हज्जाम

तो क्या दो पैसे में हाथी छोड़ देता !

बुद्धू

नाई होकर मुँहजोरी करता है।

नाई

मुँहजोरी के लिए भी जाति चाहिये ? अच्छा तो सेठ जी आपको क्या मालूम नहीं है कि हम लोग अब ब्राह्मण बन गये हैं ?

बुद्धू

अरे तू ब्राह्मण बनेगा तो मैं भगवान होऊँगा, समझता है ? बातें न कर, सीधी तरह डाढ़ी बना।

नाई

आपने दो पैसे क्या दिये, मुझे तो दिन भर का ग़ुलाम बना लिया। सवेरे से कभी बाल कटवाते हैं, कभी मूँछें छटवाते हैं, कभी डाढ़ी बनवाते हैं। अब इन खूँटियों को मैं क्या करूँ। यह तो बुढ़ापे की खेती है सेठ जी, जितनी काटिये उतनी बढ़ेगी। छीलते-छीलते चमड़ा तो घिस चुका और अब कितना छिलवाइयेगा।

बुद्धू

कोई परवाह नहीं। चमड़ा छिलने से चेहरा लाल हो

जायगा। पूरी जवानी आ जायगी। तू छिलने-छिलाने की फ़िक्र न कर। एकदम इन ससुरी खूँटियों की जड़ ही खोद डाल।

नाई

जो हुक्म ! तो आप कुरसी पर बैठ जाइये।

[बुद्धू बैठ जाता है। नाई मुँह में साबुन पोत कर अपना उस्तरा निकालता है और जूते की तली पर उसे साफ़ करता है।]

बुद्धू

अबे ! यह क्या करता है ?

नाई

जल्दी में सिल्ली लाना भूल गया सरकार !

बुद्धू

तो अपने जूते की धूल मेरे मुँह पर लगायगा !

[उठ कर]

यह मैं कभी न होने दूँगा।

नाई

तो मैं जाता हूँ सरकार!

[छूरा बन्द कर जाना चाहता है]

थैला

सरकार दूसरा नाई कम से कम दो पैसे और लेगा।

बुद्धू

[नाई से]

अच्छा ले भाई! तेरी ही बात रही, ले बना। मैं आँख मूँद लूँगा और समझ लूँगा कि तू ने मेरी डाढ़ी पर अपना वह छूरा लगाया ही नहीं! ले जल्दी कर।

[आँख मूँद कर बैठ जाता है। फिर आँख खोल कर]

हाँ और देख, मूछों के सफ़ेद बाल भी काट देना, भला! यह काम पहिले करना, डाढ़ी छीलना पीछे।

नाई

काम पर काम। वाह रे दो पैसे! अच्छा भाई, जो आज्ञा!

[कैंची और उस्तरे से मूँछों को ऊबड़-खाबड़ बना देता है। फिर डाढ़ी पर उस्तरा रगड़ता है।]

बुद्धू

[चिल्लाकर]

अरे, अरे, मैं मरा मरा। बस बस, छोड़।

नाई

[डाँटकर]

हल्ला नहीं, चुप बैठो! नहीं तो छुरे से गरदन कट जायगी।

बुद्धू

ख़ुदा के लिये माफ़ कर! मैं डाढ़ी नहीं बनवाता।

[उठना चाहता है]

नाई

[दबा कर बैठाते हुए]

बैठिये बैठिये सेठ जी! थोड़ी देर की तकलीफ है। फिर तो मज़ा ही मज़ा है। "पीर सहे बिन पद्मिनी पूत न लेत उछंग।"

बुद्धू

[ज़बरदस्ती खड़ा होकर]

भाड़ में जाय तेरी पदमिनी! मैं बाज़ आया ऐसी हजामत से। थैला, निकाल बाहर कर इस नाई को।

[थैला निकाल बाहर करता है। बुद्धू फिर शीशे के पास जाता है और आधी ढाढ़ी में साबुन और आधी में खून देखता है तथा मूँछों की अजीब हालत देख कर गुस्से के मारे हाथ पर हाथ मारता है।]

थैला! इस नामाकूल नाई ने तो मेरा मुँह बन्दरों की उजाड़ी हुई बाड़ी की तरह बरबाद कर दिया। जा, तू दूसरा नाई पकड़ ला। अफ़सोस! अब दो पैसे और लगेंगे।

[थैला जाता है और एक दूसरा नाई पकड़ लाता है।]

बुद्धू

देखो जी, तुम मेरी मूछें एकदम ठीक कर दो। यह धेले का भी काम नहीं है लेकिन मैं तुमको एक पैसा दूँगा।

नाई

मैं चार आने से कम न लूँगा। दो आने तो हजामत का मिहनताना और दो आने इस धक्कम-धक्का और धर-पकड़ का हरजाना।

बुद्धू

यह क्या ?

नाई

अपने नौकर से पूछिये।

बुद्धू

क्यों थैला ?

थैला

हुजूर ने ही तो कहा था कि दूसरा नाई पकड़ ला।

बुद्धू

नामाक़ूल, नमकहराम, गधा, सुअर, पाजी, बेदुम का बन्दर,........................

थैला

सुनिये सुनिये ! आठ पैसे तो इस हज्जाम को मिलने वाले हैं; फिर इस तरह आठ-आठ गालियों का ख़ज़ाना मुझ पर क्यों ख़ाली कर रहे हैं ?

बुद्धू

अफ़सोस, वक्त़ कम है ! चौपटचन्द आते ही होंगे। उनके साथ लड़की देखने जल्द जाना होगा। इसलिये अब तुमसे हुज्जत करने का वक्त़ नहीं।

थैला

आक् छिः; धत्तेरे की ! अब की दफ़ा बड़ी देर में आई।

बुद्धू

[गुस्से से]

तू अपनी नाक काट डाल।

थैला

वह तो आपकी नौकरी में नाम लिखाते ही कटा चुका हूँ।

बुद्धू

[उसकी ओर आँखें निकाल कर देखता है और चुप होकर नाई से कहता है ।]

अच्छा बाबा, जो चाहो सो ले लो; लेकिन मेरी मूछें ठीक कर दो ।

नाई

पहिले पैसे लाइये ।

बुद्धू

चोर कहीं का ! जैसे मैं कहीं भागा जाता हूँ । थैला ! निकाल बाहर कर इस नामाक़ूल को !

[थैला निकाल देता है ।]

बुद्धू

हैं, हैं, यह क्या किया तूने उल्लू के पट्ठे ! सचमुच उसे निकाल दिया ! बुला बुला, उस नाई को ! आइये, आइये,

ब्राह्मण देवता ! चार की जगह आठ आने पेशगी ले लीजिये। इस लुच्चे नौकर की बात का ख्याल न कीजिये, यह लीजिये पैसा।

[पैसे देकर नाई को वापिस लाता है।]

[नाई आकर झटपट मूछों के किनारे उस्तरा फेर देता और चल देता है।]

बुद्धू

[शीशे के सामने जाकर]

अरे, मूछों की सफ़ेदी फिर भी न गई। मैं जवान कैसे बनूँ !

थैला

आक् छिः !

बुद्धू

ठठोली छोड़ पागल ! कोई रास्ता बता। इस वक़्त तो मेरी अकल कुछ काम नहीं करती।

थैला

ख़िज़ाब लगा लीजिये हुजूर ! सब ऐब ढक जायँगे।

बुद्धू

ठीक तो कहा। अच्छा वही ले आ।

थैला

[खिजाब की शीशी लाता है।]

बुद्धू

[रगड़-रगड़ कर सिर मूछों, और डाढ़ी पर मलना शुरू करता है। थोड़ी देर में जलन होने लगती है।]

अरे बाप रे ! मेरा मुँह तो जलने लगा रे !

[शीशे के पास जाकर कष्ट से उछलता हुआ]

अरे अरे अरे, मेरा मुँह भी काला हो गया और उस में आग भी लग गई रे थैला ! थैला !

थैला

घबराइये मत। डाढ़ी से क़ुदरती पानी निकल कर अभी आग बुझा देगा।

बुद्धू

अरे बाप रे, मैं मरा रे मरा ! ऊहूँ ! ऊहूँ !

[रोता है ।]

थैला

[नक़ल करता हुआ]

अरे बाप रे ! सरकार मरे रे, मरे, उहूँ, उहूँ, उहूँ !

[ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता है ।]

चौपटचन्द

[आकर]

अरे, अरे, कब मर गये, सेठ जी कब मर गये रे थैला ! मेरा तो सब खेल चौपट हो गया ।

थैला

आक् छिः, सेठ जी ही से पूछ लीजिये । उ हूँ हूँ हूँ !

चौपटचन्द

[सेठ को देख कर]

अरे रे, सेठ जी तो ज़िन्दा हैं ! ओह सेठ जी, इस हालत में !

बुद्धू

भाई, कुछ न पूछो। ख़िजाब ने तो आफ़त कर दी। जलन हुई सो अलग, मुँह भी काला हो गया।

चौपटचन्द

तो पाउडर मल लीजिये। सफ़ेद हो जायगा।

बुद्धू

लाओ भाई, वही ले आओ।

चौपटचन्द

मैं ख़ुद ही ले आया हूँ। मैं जानता था कि इस की ज़रूरत पड़ेगी।

[पाउडर लाकर मलता है।]

बुद्धू

[आइने के सामने जाकर]

अब तो मैं चितकबरा हो गया। लेकिन ख़ून की सुर्ख़ी तो उड़ गई।

चौपट

मैं वह भी लगाये देता हूँ, गुलाबी पाउडर भी ले आया हूँ।

[गालों को लाल कर देता है।]

बुद्धू

लेकिन भाई साहब ! इन टूटे दाँतों का क्या होगा ?

चौपटचन्द

कुछ नहीं, सुपारी के टुकड़े गोंद से चिपका कर जमा लीजिये। आप के दाँतों से ख़ूब जोड़ मिल जायगा। डेण्टिस्ट देरी लगायगा।

बुद्धू

और ये झुर्रियाँ ?

चौपटचन्द

पाउडर का एक कोट ज़्यादा बढ़ा दीजिये।

बुद्धू

ठीक कहा, ठीक कहा भाई साहब ! पाउडर ही ठीक

है। लेकिन वह इन नक़ली चीज़ों को पहिचान तो न लेगी ?

चौंपटचन्द

अजी, घर की लड़की है, कुछ आपको बारीकी से घूरेगी थोड़े ही ! हर चीज़ पर दनादन इत्र पोत लीजिये, बस वह जिधर आँख उठायेगी, उधर ही ख़ुशबू से तर हो जायगी।

बुद्धू

[चौपट के हाथ पर हाथ मार कर]

जीते रहो भाई ! यह ख़ूब याद दिलाई। इत्र की बात तो मैं भूल ही गया था। अच्छा आओ, ज़रा कारख़ाने चलो। जो जो इत्र कहोगे, वही पोत लूँगा।

[चौपट को लेकर भीतर जाता है]

थैला

अच्छा खूसट दूल्हा बनेगा। खिज़ाब से काली मूँछें और बाल, पाउडर से सफ़ेद झुर्रियों वाले गाल, ऊपर से सेंदुर की लाली का थाल, भीतर से सुपारी के टुकड़ों का

दाँतों में गोल-माल, जिधर देखो, उधर कमाल ! आक् छिः, धत्तेरे की !

धुन जिला—ताल कहरवा

बूढ़े बाबा करेंगे ब्याह,
मौत के मुँह में जाने वाले ।
थलथल लटक रही है खाल,
कैसी लष्टम-पष्टम चाल,
हँफते हँफनी से बेहाल,
फिर भी सजते साज निराले ॥
बूढ़े बाबा०—

लगेगी नातिन जोरू यार,
देख कर होगी वह बेज़ार ।
बाप माँ को देकर फटकार,
करेगी वह बेचारी नाले ॥
अजब होगी दोनों की होड़,
सेठ जी आवेंगे कर जोड़ ।
सेठानी बैठेंगी मुँह मोड़,
सेठ नाचेंगे तोंद निकाले ॥
बूढ़े बाबा०—

[अजब ठाट से सजे हुए सेठ बुद्धूमल आकर शीशे के सामने खड़े होते और अपनी ही शान में दो-चार क़दम इधर-उधर चलते हैं, फिर चौपटचन्द को देखते हैं।]

बुद्धू

भाई चौपट ! सब कुछ तो हुआ; लेकिन इस टेढ़ी कमर को किस तरह सीधी किया जाय।

चौपटचन्द

हकीम जी का कुश्ता खाइये और उनका दिया हुआ साँडे का तेल कमर पर घिसवाइये। फिर देखिये, कुत्ते की दुम की तरह टेढ़ी रहने वाली यह कमर किस तरह फटे बाँस की तरह खड़ी हो जाती है।

बुद्धू

[कौतूहल से]

क्या सच ! उनकी दवाओं में इतनी ताक़त है !

चौपटचन्द

हाँ, हाँ, आप मेरे यहाँ चलने के पहिले हकीम जी के

यहाँ से होते चलिए। देखिये, फिर किस तरह उनकी दवाएँ जादू का सा असर करती हैं।

बुद्धू

तो चलिए चलिए, जल्द चलिए।

[उठकर चलना चाहता है।]

शैला

आक् छिः, धत्तेरे की !

बुद्धू

धत तेरे बन्दर की दुम में धागा।

शैला

लीजिये सरकार, मैं पहिले ही भागा।

[भाग जाता है।]

बुद्धू

बड़ा पाजी है। चौपटचन्द जी, इस मनहूस ने मजा किरकिरा कर दिया।

[चौपट को लेकर जाता है।]

(परदा गिरता है)

चौथा दृश्य

[वही ऊसर]

मणिसिंह

[उदासी से]

हाय ! कैसा स्थान है ! कुछ समझ में नहीं आता यहीं से राजकुमारी ग़ायब हुई और यहीं राजकुमार भी अन्तर्धान हो गये। अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? किससे पूछूँ ? चारों तरफ़ ख़ाली मैदान है ! ऊपर कोई चिड़िया तक नज़र नहीं आती। रात का अँधेरा आगे बढ़ कर सूरज की रोशनी को निगलने ही वाला है। क्या इसी तरह मेरी निराशा मेरी आशा को निगल जायगी ? मैं अकेला क्या करूँ ? कब तक यहाँ इस तरह खड़ा रहूँ ? थोड़ी देर में आसमान तारे-रूपी आँखें निकाल-निकाल कर मुझे डरायेगा। मेरे रहे सहे उत्साह को भी अपनी ओस की बूँदों से ठण्ढा कर देगा। क्या इसी का नाम दुनियाँ है ! दुखिया के दुखों की कौन परवाह करता है ? सब अपनी-अपनी धुन में मस्त हैं।

आसमान को मेरी मुसीबतों से कोई वास्ता नहीं है। चहकते हुए परिन्द भी मेरे सिर के ऊपर से उड़कर अपने अपने घोंसलों में जा छिपेंगे और रात होते ही बच्चों की आँख के समान यह ऊसर की पगडण्डी भी बन्द हो जायगी। फिर अकेला मैं, मेरी फूटी क़िस्मत और यह ख़ाली मैदान ही यहाँ बाक़ी रह जायँगे। भगवन्! क्या कोई रास्ता न दिखाओगे?

[नेपथ्य से गाने की ध्वनि आती है। मणि कान लगा कर सुनते हैं।]

कोई गाता हुआ आता है। बड़ा व्यथा-भरा सुर है। ज़रा हट कर आड़ से देखूँ, क्या बात है।

[विभा पुरुष वेश में गाती हुई आती है।]

धुन जै जैवन्ती–झपताल

प्रभु हे, कहाँ मैं बढ़ूँ, खोजत-खोजत हारी,
प्रभु हे० !
रघुनाथ करुणा करके उबारो, दुख में परी सखी प्यारी।
प्रभु हे! कहाँ मैं बढ़ूँ०

[गाते-गाते बढ़ी चली जाती है।]

मणिसिंह

[सामने आकर]

आँखों ने धोखा तो नहीं खाया! उज्जैन की वही वाटिका फिर आँखों के आगे आ गई! वही रूप! वही कंठ! जान पड़ता है उसी का भाई इस तरह व्यथा-व्यथित होकर चला गया। लेकिन यह क्या? 'खोजत-खोजत हारी' और 'सखी प्यारी' का क्या रहस्य? पुरुष इस तरह कैसे कहेगा? तब क्या यह वही है और पुरुष-वेश में निकली है? संभव है, मेरी तरह यह भी खोज ही में निकली हो। कुछ भी हो, मैं इससे ज़रूर मिलूँगा। [बढ़ता है, फिर रुक कर] वह तो इधर ही आ रहा है। अच्छा देखूँ, यदि यह वही है तो शायद मुझे पहचान भी ले।

विभा

[आकर]

रात की काली डायन संसार को निगल जाने वाली है। ऊसर के आगे कोई गाँव नहीं दिखाई देता। उजेला रहते लौट चलूँ। आह! पैर बढ़ते ही नहीं। क्या करूँ! प्यारी सखी को कहाँ ढूढ़ूँ। कोई सहारा नहीं।

कोई मददगार नहीं। कोई रास्ता नहीं। कोई पता नहीं। क्या करूँ, क्या न करूँ! हाय, भोली-भाली सखी! जिसने कभी दुख का नाम तक न सुना था उसका यह हाल हो? मखमलों पर सोनेवाली क्या कंकड़ीली जमीन पर ठोकरें खा रही होगी? दूध-मलाइयों में ही पलने वाली को अब सूखे चने भी नसीब होते हैं कि नहीं? दिन-रात दास-दासियों से घिरी रहने वाली क्या अब मिहनत-मजदूरी करने के लिये लाचार की जा रही है? डाकुओं के हाथों जो अत्याचार न हो, वही थोड़ा है।

[काँप कर]

ओह! उस बात का ध्यान करते ही देह काँप उठती है। प्यारी सखी! प्यारी प्रभा! प्यारी राजकुमारी! तेरी क्या हालत हो रही होगी?

न जाने किस तरह वह जिन्दगी अपनी बिताती है।
हँसाती थी सभी को वह सबों को अब रुलाती है।
कहीं दुख में पड़ी रोती बिलखती छटपटाती है।
इसी जग में है या उस लोक की शोभा बढ़ाती है॥
पता मिलता नहीं कुछ भी कहाँ जाऊँ कहाँ ढूढ़ूँ।
बता दो कुछ पता स्वामी! सखी को मैं जहाँ ढूँढ़ूँ॥

[मणि धीरे-धीरे आकर विभा के सामने खड़े हो जाते हैं।]

विभा

[मणि को ग़ौर से देख कर]

ऐं, आप यहाँ कहाँ ?

मणिसिंह

मैं भी यही पूछना चाहता हूँ कि आप पुरुष-वेश में यहाँ कहाँ ?

विभा

[कुछ शर्मा कर]

आपके साथी राजकुमार कहाँ गये ?

मणिसिंह

मैं स्वयं नहीं बता सकता। आपकी राजकुमारी भी ठीक यहीं से अन्तर्धान हुई थीं और मेरे राजकुमार भी यहीं खो गये। इस भूमि में, जान पड़ता है, कुछ रहस्य छिपा हुआ है।

विभा

तो अब हम लोगों को क्या करना चाहिये ?

मणिसिंह

तुम अकेली ही हो ? क्या तुम्हारे महाराज ने खोज में कुछ आदमी नहीं भेजे ?

विभा

भेजे होंगे, परन्तु मुझे उसकी कोई सूचना नहीं। मैं तो पागल-सी हो कर अकेली ही भाग निकली।

मणिसिंह

मेरा तो विचार है कि मैं यहीं धूनी रमाऊँ। दिल बोलता है कि यहीं दोनों का पता लगेगा।

विभा

तो मुझे भी चेला अथवा चेली बना लेने की कृपा कीजियेगा ?

मणिसिंह

अहोभाग्य ! हम दोनों का खूब योग सधेगा !

विभा

मैं गम्भीर होकर बात कर रही हूँ। यह हँसी का समय नहीं है।

मणिसिंह

मैं आप से अधिक गम्भीर हूँ। आप मुझ पर और मेरे आर्यत्व पर विश्वास रखिये !

विभा

अच्छा तो फिर यही सही। [दोनों जाते हैं]

(परदा उठता है।)

पाँचवाँ दृश्य

[बुद्धूमल का घर—ब्याह की धूम-धाम, वर-वधू चौकियों पर बैठे हैं, एक आसन पर चौपटचन्द, दूसरे पर पण्डित जी बैठे हैं। सामने नर्तकियाँ कोरस में गा और नाच रही हैं।]

नर्तकियाँ

धुन पीलू—ताल दादरा

गोरी धीरे धीरे मारो नजरिया रे।
तोरी कमसिन है बारी उमरिया॥
तोरे नैना कटीले पै वारे सँवरिया।
डारो न जादू गुजरिया॥ गोरी०॥
प्यारी बारी सनेह में।
(देखो,) ठाढ़ी है कैसी अटरिया॥
प्यारी, बलिहारी, तो पै वारी।
अजीब हुस्नो-अदा तुमने सनम! पाई है।
कि यह ज़माना तुम्हारा बना शैदाई है॥
जिधर निगाह तुम्हारी उठी उधर ऐ जाँ!

सभी ने समझा कि फ़स्ले-बहार आई है ॥
तोरे नैना ०

[गा कर हट जाती हैं ।]

बुद्धू

हाँ पण्डित जी ! आप भी अब झटपट सब मामला ख़त्म करके नौ दो ग्यारह हो जाइये। कुछ पहिला व्याह तो है नहीं जो देर लगाई जाय । आप चाहें, अपनी फ़ीस पेशगी ही ले लीजिये, लेकिन अब देर का काम नहीं है ।

पण्डित जी

अच्छा, लीजिये सेठ साहब, अभी लीजिये । अगर आप चाहें तो मैं एक मिनट में सब काम ख़त्म कर दूँ ।

बुद्धू

हाँ, हाँ, ऐसा ही कीजिये ।

पण्डित जी

अच्छा, तो आप दोनों हाथ पर हाथ रखिये ।

[बुद्धूमल उलटा-पुलटा हाथ रखता है ।]

अजी नहीं, ऐसा नहीं । सेठानी जी के दोनों हाथों को आप अपने हाथों में लीजिये ।

[सेठ जी आलिङ्गन के भाव से दोनों बाहें समेट लेते हैं । सेठानी पेट पर चपतें लगा देती हैं ।]

अजी राम राम ! ऐसा नहीं सेठ जी ! आप सिर्फ़ उनकी हथेलियों को अपनी हथेली में लीजिये ।

[सेठ जी वैसा ही करते हैं ।]

हाँ ! ठीक है । अब आप कहिये, 'प्यारी तुम हमारी ।'

बुद्धू

वाह पण्डित जी, सेठानी मेरी है कि तेरी ।

पण्डित जी

अक़ल में पत्थर पड़ गये ! भाई चौपटचंद जी आप ही समझाइये ।

चौपटचंद

सेठ जी, आप कहिये "सेठानी प्यारी तुम हमारी ।"

बुद्धू

ऐसा, ऐसा, अच्छा ठीक है।

[श्रद्धा के साथ बुधिया को देखकर ज़रा गाने के से ढंग पर]

मेरी प्यारी, बलिहारी, तुम हमारी ! ओय होय !

पण्डित

श्रीमती सेठानी जी साहिबा, आप भी कहने की कृपा करें "प्यारे तुम हमारे।"

सेठानी

[चौपटचन्द की ओर देखते हुए]

प्यारे तुम हमारे !

बुद्धू

शरमीली लड़की है।

पण्डित

लीजिये शादी हो गई।

थैला

आक् छिः, धत्तेरे की !

बाबा रे, बड़े बुरे मौक़े पर ज़ुकाम ने जोर किया।

[बुद्धूमल जोश में आकर थैला को मारने दौड़ता है, लेकिन बुधिया से गाँठ बँधी रहने के कारण हड़बड़ा कर गिर पड़ता है। थैला भाग जाता है। चौपटचन्द "अरे अरे" कहते हुए झट गाँठ खोल देता है और पण्डित जी से इशारा करता हुआ कहता है "बस, आप तशरीफ़ ले जाइये।" पण्डित जी सामान समेट कर चलते बनते हैं।]

चौपटचन्द

[चिल्ला कर]

अबे थैला, नाचने वालियों को भेज दे !

थैला

[बाहर ही से, "जो आज्ञा, आक् छिः"]

बुद्धू

इस लुच्चे की नाक में पलीता घुसेड़ दो। अफ़सोस ! हाथ से निकल गया, नहीं तो अभी पीस डालता।

चौंपटचन्द

[बुद्धू और बुधिया को सोफ़ा की तरफ़ ले जाकर बैठाता हुआ]

ठहरो भाई बुद्धूमल जी, ख़ुशी के मौके पर ग़ुस्सा करने की ज़रूरत नहीं।

[नर्तकियाँ आती हैं और नाचती गाती हैं।]

धुन माड़–ताल दादरा

प्यारी, प्यारी रातों में, वस्ल का है वादा,
यार से बढ़ो लगो गले।
भौंह कमान नयन बान,
उझक उझक लिपट झपट छीन लिया है दिल को,
मद-भरी, रसमयी, सुन्दरी।
लचक, मचक, कमर झलक
कल न परत अधर धरत,
सेठ जी का प्यार।

[बुद्धूमल का ग़ुस्सा धीरे-धीरे ठण्डा हो जाता है। नर्तकियाँ जाती हैं।]

बुद्धू

[चौपटचन्द से]

भाई साहब, तो फिर अब कल मुलाक़ात होगी।

चौपटचन्द

हाँ, हाँ, इसमें क्या शक है ! इस वक्त तो रात का एक एक पल भी आपके लिए क़ीमती है।

बुद्धू

हँ हँ हँ ! आप ससुर होकर भी मज़ाक करने लगे ! अच्छा, ज़रा आज थैला हरामज़ादे को भी अपने ही साथ लेते जाइयेगा। इस घर में आज रात को अब किसी तीसरे की ज़रूरत नहीं।

चौपटचन्द

मैं समझ गया। आप बिलकुल बेफ़िक्र रहें।

[जाना चाहता है फिर लौटकर]

देखिये, लड़की नादान है, भला ?

बुद्धू

हाँ, हाँ, मैं खूब समझता हूँ ।

चौपटचन्द

[जाना चाहता है । फिर लौटकर बुधिया को छाती से लगा लेता है]

मेरी प्यारी बच्ची !

बुधिया

मेरे प्यारे.........

[हँसते हुए भी रोने का नाट्य करके]

हूँ, हूँ, हूँ, ।

चौपटचन्द

न रो, न रो, मैं हर रोज़ तेरी देख-भाल किया करूँगा ।

बुद्धू

हाँ, भाई ! चौपटचन्द जी, घर आपका है । हर रोज़ दर्शन दे दिया कीजिये । अच्छा, तो इस वक़्त आप भी आराम कीजिये ।

[जाते जाते बार बार लौटता है और "देखिये सेठ जी" कहता जाता है। सेठ बुद्धूमल जी "हाँ, हाँ आप बेफिक्र रहिये" कहते हुए दरवाज़े तक हटा आते हैं और किवाड़े बन्द कर आते हैं। लौट कर दबे क़दमों से आकर बुधिया का हाथ पकड़ लेते हैं।]

बुद्धू

[मटक के साथ]

मेरी छबीली प्यारी !

बुधिया

[उनके हाथ को पेट की तरफ झटकार कर और मुँह टेढ़ा करके]

हटो, जाओ !

बुद्धू

[पेट पर हाथ फेरता हुआ]

हैं, हैं, यह ढोलक नहीं, मेरा पेट है प्यारी ! बड़े लाड़-प्यार से इतना बढ़ा है।

सवा दो सेर चावल रोज़ मैं इसमें भराता हूँ।
कभी चाटें चखाता हूँ कभी घेवर उड़ाता हूँ।
जो इसके भाग से मैं दावतें दो-चार पाता हूँ।
तो घी पी पी के कुप्पे-सा इसे एकदम फुलाता हूँ।
इसी के वास्ते मैं ने न क्या कुछ कर उठाया है।
बड़े ही प्यार से मैं ने इसे इतना बढ़ाया है॥

[बुधिया, बुद्धू की तरफ देखकर मुस्कुराती है।]

बुद्धू

बस बस, फ़तह फ़तह! वह फूल झड़े, वह फूल झड़े!

[बुधिया खिलखिलाकर हँस पड़ती है।]

वह मारा मैदान, वह मारा मैदान! पौबारह!

[दौड़ कर लिपटना चाहता है, बुधिया हट जाती है, बुद्धू आगे बढ़ कर खंभे से भिड़ पड़ता है।]

तुम तो बड़ी ठठोल हो। अपने बदले खंभा खड़ा कर दिया।

बुधिया

सेठ जी, आपका यह भारी-भरकम तोंद देख कर तो मैं डर गई। इसीलिए हट भी गई। न हटती तो यह पहाड़ मेरे ही ऊपर न फट पड़ता!

बुद्धू

प्यारी, यह तोंद तो तुम्हारे ऐशो-इशरत का गदेला है। इससे तुम्हें तकलीफ़ बिल्कुल न होगी, बिल्कुल न होगी।

बुधिया

[आँखें तिरछी करके]

बस, बस रहने भी दीजिये। बाज़ आई मैं इस गदेले से। इसके नीचे दब कर रुई के फाहे की तरह मेरा तो कहीं पता ही नहीं लगेगा।

[फिर तिरछी नज़र से देखती है।]

बुद्धू

[उछलता हुआ गाता है]

धुन पीलू—ताल दादरा

हाँ, री प्यारी, नैनों के तीर क्यों चला रही।
दिल को मेरे जख्मी बना रही।
बातों में भोली-सी, करके ठठोली-सी,
ऐसा देती हो जादू डाल ।

कपट चतुर निपट निठुर
लचक मचक चटक मटक तुम्हारी है चाल ॥

बुधिया

धुन पीलू—ताल दादरा

जाओ जाओ, बातों में मुझको फँसा रहे।
प्यारे सैंया, हँसके लुभा रहे।
रसभरी बोली है, बाँकी ठठोली है।
बातों में तुम होशियार ।
फहर फहर, छवि की छहर,
सुख की वहर रस की लहर, कैसा मीठा प्यार !

बुद्धू

वाह री, मेरी चटपटी कचालू ! तू तो आठो गाँठ कुम्मैद निकली।

[पुचकार कर तथा बाँह में बाँह डाल कर]

बुद्धू

धुन पीलू—ताल दादरा

चलो प्यारी ! मजे हम उड़ायेंगे।

बुधिया

दिलवर ! रातों को सुख से बितायेंगे।

बुद्धू

सूरत है प्यारी प्यारी,

बुधिया

तुम पै निसार प्यारे !

बुद्धू

बाँकी बहारें दिखायँगे प्यारी !—

बुधिया

बलिहारी, तो पै वारी।

[दोनों उछलते-कूदते जाने लगते हैं। दरवाज़े पर ज़ोरों का धक्का होता है।]

बुद्धू

[हाथ जोड़ कर]

ऐं, यह कौन मरदुआ आ पहुँचा ! यह बदमाश थैला फिर तो नहीं आ गया ! अभी इसको जूतों की ठोकरें लगाता हूँ।

[जोश में जाकर दरवाज़ा खोल देता है। कई डाकू घुस पड़ते हैं।]

कौन ?

[सहम कर]

तुम लोग कौन हो ?

कालू

हम डाकू हैं मक्खी चूस ! निकाल सब माल।

[बुधिया, पहिचान कर कालू के पैर पकड़ लेती है।]

मेरे स्वामी ! मुझे बचाओ !

कालू

[देख कर]

कौन बुधिया ! अरे तू यहाँ कैसे ?

बुधिया

[रोनी सूरत बनाकर]

सेठ जी, मुझे पकड़ लाये ! ऊहूँ हूँ हूँ।

कालू

[बुद्धू की तरफ़ देख कर]

क्यों बे नकटे ! इस बुढ़ापे में यह हाल !

बुद्धू

[रो कर]

दोहाई डाकू सरदार की ! मैं बेकसूर हूँ । मरा रे मरा !

कालू

[दूसरे डाकू से]

ठूँस दे इस पाजी के मुँह में कपड़ा । हल्ला करता है !

[डाकू मुँह में कपड़ा ठूँस देता है ।]

अब बाँध दे इसको खंभे से ।

[डाकू बाँध देता है ।]

जाओ, लूट लो इसका मालमता ।

[डाकू भीतर घुस जाते हैं । बँधे बुद्धू के पेट में लात मार कर]

क्यों बे, अब निकाल लूँ तेरी आँखे ! भोंक दूँ तेरे पेट में तलवार !

[तलवार निकाल कर उस तरफ़ ले जाता है ।]

बुधिया

रहम करो स्वामी, रहम करो !

कालू

इस कमीने पर और रहम !

बुधिया

मक्खी को मारना बहादुरों का काम नहीं।

कालू

ठीक कहा! इस मच्छड़ को क्या मारें।

[डाकू लोग लूट का माल लादे हुए आते हैं।]

क्यों, काफ़ी मिला कि नहीं?

एक

बहुत मिला सरदार! बेचारे सेठ जी ने बहुत मिहनत से यह सब धन हम लोगों के लिये जोड़ रखा था।

कालू

[बुद्धू की तरफ़ देखते हुए]

बच्चा जाओ, ज़िन्दगी बख़्शे देते हैं। फिर इसी तरह मक्खीचूसी करके हम लोगों के लिये धन इकट्ठा कर रखना।

[शान से अकड़ता हुआ चला जाता है। साथ ही बुधिया और दूसरे डाकू भी चल देते हैं। बेबस बुद्धू फड़फड़ाता हुआ रह जाता है।]

(परदा गिरता है।)

छठाँ दृश्य

अजित

[एकान्त वनप्रान्त]

अफ़सोस, इतना बड़ा राजा होकर भी मैंने डाकुओं पर विश्वास किया। क्या करूँ ! मैंने यह रहस्य एकदम गुप्त रखा है, इसलिये अपने ख़ास-ख़ास आदमियों के साथ मुझे ही खोज के लिये निकलना पड़ा। उनको पा भर जाऊँ, फिर तो मैं समझ लूँगा। कालू कितना बेईमान निकला ! ओफ़ ! क्या करूँ ? क्या प्रभा से हाथ धो बैठूँ ! नहीं, यह नामुमकिन है। उज्जैन-नरेश से अपने अपमान का बदला अवश्य लूँगा। सुनता हूँ कि डाकू लोग उसे उड़ा तो ज़रूर ले गये हैं—चंचल और केसर ने भी यही कहा है और अफ़वाह भी यही है—लेकिन जान पड़ता है, या तो कालू ही की नीयत बदल गई या वे दोनों कुमार, जिनका ज़िक्र

चंचल और केसर ने किया था, उसे छुड़ा ले गये। जो कुछ हो, कालू को मेरे पास आना ज़रूर था। मेरे दोस्त अजबसिंह को उनका अड्डा मालूम है। उसी ने तो कालू को मेरे पास भेजा था। उसी से पता पूछ कर कालू के अड्डे पर जाऊँ और पता लगाऊँ कि क्या मामला है। [जाता है।]

[परदा उठता है।]

सातवाँ दृश्य

[उसी उजाड़ ऊसर के किनारे एक झाड़ के नीचे डाढ़ी-मूँछें लगा कर साधू के वेश में मणि और उनके चेले के वेश में विभा ।]

मणिसिंह

अभी तक कुछ पता न लगा ।

विभा

कुछ तो नहीं ।

मणिसिंह

फिर क्या किया जाय ?

विभा

संकट के समय भगवान का ही ध्यान किया जाय । वे ही संकट-मोचन हैं, उन्हीं का सहारा है ।

मणिसिंह

ठीक कहा, आओ हम दोनों उन्हीं का ध्यान करें ।

[दोनों गाते हैं]

धुन सुघराई–तीन ताल

अशरण-शरण ! शरण हम तेरी ।
दीन हीन गज गणिका तारे, हमरी बेर क्यों इतनी देरी ।
अंधकार पथ कछु नहिं सूझै, नाथ ! ज्ञान की देहु उजेरी ।
बिघन-बिनासन ! बेगि उबारो, दीन जनन की विपदा हेरी ॥

मणिसिंह

देखो देखो, वह सामने से कोई स्त्री आ रही है। इस सुनसान में अकेली स्त्री का आगमन रहस्य से ख़ाली नहीं। शायद इसी से कुछ सहारा मिल जाय। मुमकिन है कि भगवान् ने हम लोगों की विनती सुनकर ही इसे यहाँ भेजा हो।

विभा

चाल से तो कोई भलीमानस नहीं जान पड़ती।

मणिसिंह

तब तो और भी अच्छा है। डाकुओं का पता भले-मानसों से नहीं लगा करता। इस वक़्त साम, दाम, दण्ड, भेद सब

लगाना है। तुम स्त्री हो, इसलिये स्त्रियों के रहस्य खूब समझ सकती हो। तुम्हीं आगे बढ़ो।

विभा

बहुत अच्छा !

[ढंग के साथ आगे बढ़ना। बुधिया का आना। दोनों की चार आँखें होना। विभा का चाहभारी आँखों से आशिक़ होने की-सी मुद्रा दिखाना।]

बुधिया

ओ हो, कैसा गबरू जवान है।

[नख़रे से]

क्यों जनाब, आप कौन हैं ?

विभा

मुझे लोग चेतनदास कहते हैं।

बुधिया

तो मुझे घूर-घूर कर क्यों देख रहे हैं ?

विभा

भगवान् की दी हुई सुन्दरता को देखना कोई पाप नहीं है।

बुधिया

क्या मैं सचमुच सुन्दर हूँ ?

विभा

क्या तुमको इसमें भी शक है ? अजी,

गुलों में है कहाँ रंगत जो रंगत तुमने पाई है।
तुम्हीं से कोकिला ने कण्ठ की वाणी चुराई है॥
तुम्हारे नैन बाणों का असर भी मात करते हैं।
सिमट कर विश्व की शोभा इसी मुँह में समाई है॥

बुधिया

अच्छा तो आप कवि भी हैं ?

विभा

भगवान् की जीती-जागती कविता तो तुम सामने खड़ी हो। तुम्हें देख कर कौन पुरुष होगा जो कवि न बन जायगा।

बुधिया

मुझे ज़रा सोच लेने दो।

[अलग हट कर]

मैं निखट्टू कालू से तंग आगई हूँ। उसने एक राजकुमारी को फाँस रक्खा है और उसी के पीछे पागल है। इसीलिये चौपट की खोज में निकली थी। यह जवान तो चौपट से बहुत ज्यादा रसीला है। फिर इसी को अपने गले का हार क्यों न बनाऊँ! यह गेरुए कपड़े वाला है इसलिये इसका घर-बार कोई न होगा। बस, इसको तिलस्म का रहस्य बतला कर डाकुओं को फँसवा दूँ और इसके साथ उसी तिलस्म में मौज करूँ।

विभा

क्या सोच रही हो प्यारी! क्या मेरा दिल तोड़ ही दोगी?

बुधिया

क्या तुम सचमुच मेरे होगे!

विभा

ऐसे विश्वास न होता हो तो क़सम खिला लो। यदि झूठ बोलूँ तो

[बुधिया की ज़ुल्फ़ छूकर]

तुम्हारे ये काले नाग मुझे डंस लें।

[बुधिया की ठोढ़ी छूकर]

तुम्हारे इस चाहे-ज़कन में मैं डूब मरूँ।... ...

बुधिया

बस बस,बहुत हुआ। देखो, तुम मेरे हो जाओगे तो मैं तुम्हें तिलस्म का राजा बना दूँगी। तुम्हें एक बहुत बड़े ख़ज़ाने का मालिक बना दूँगी। लेकिन तुमको कुछ डाकुओं से मुक़ाबिला करना पड़ेगा। घबराओगे तो नहीं ? तुमको लड़ना न पड़ेगा। सिर्फ़ उन्हें बेहोश करके मार डालना पड़ेगा।

विभा

[ख़ुश होकर]

जल्द बता मेरी प्यारी ! मैं बहादुर हूँ। लड़ने से नहीं घबराता। मैं तेरे लिए उनसे युद्ध भी कर सकता हूँ।

बुधिया

तो फिर आओ, सुनो !

[कान में बातें करती है ।]

अच्छा देखो, मैं बाहर जाती हूँ । तुम वहीं मिलना । फिर मैं आकर सब ठीक-ठाक कर दूँगी ।

[सतृष्ण नयनों से उसकी ओर देखते हुए प्रस्थान । फिर लौट कर]

लेकिन देखो प्यारे ! अपना वादा भूल न जाना ।

[फिर उसी तरह प्रस्थान]

विभा

[उसके चली जाने पर झटपट मणि की ओर बढ़ती हुई ।]

बस, फ़तह है । ईश्वर को धन्यवाद दो । पता लग गया । उपाय मिल गया । आओ, हम लोग भी अपना कार्य स्थिर कर लें ।

मणि

[झपटते हुए आकर]

कहो कहो, क्या हुआ ? पता चला ?

विभा

पता ही नहीं सभी कुछ मिल गया ! आओ, हम लोग अपना कर्तव्य स्थिर करें। तुम पहिले चलो, मैं काली के वेश में पीछे आती हूँ। समय कम है। वह रांड़ आ जायगी तो काम बिगाड़ देगी।

मणि

कहाँ चलना होगा ? कैसे चलना होगा ?

विभा

मैं तुम्हें सब बताए देती हूँ। चलो-चलो, जल्दी करो।

[मणि को लेकर सवेग प्रस्थान]

(परदा उठता है।)

आठवाँ दृश्य

[वही खोह—अकेली प्रभा]

प्रभा

[घुटने टेक कर गाती है ।]

गुण कली—ताल रूपक

दीनानाथ ! विपद हरो प्रभु !
दुख-विनासन ! अबल पालक !
शरणप्रद हरि ! विपद हरो प्रभु !
असह दुख में भ्रमित अति हूँ,
अभय कर धरि अभय करो प्रभु !
कुटिल दल से हमें छुड़ाओ
विपद हरो प्रभु ! विपद हरो प्रभु !
दीनानाथ, विपद हरो प्रभु !

नाथ ! क्या मेरी पुकार न सुनोगे ? मैं कब तक इस खन्दक में इसी तरह पड़ी रहूँगी ! क्या मुझे छुड़ाने के लिये यहाँ किसी को न भेजोगे ? नाथ ! मैंने ऐसे कौन से पाप किये हैं, जिनके लिये मुझे इतने दुख दे रहे हो ? हाय, वे

बेचारे राजकुमार भी यहाँ आ कर फँस गये। क्या यही तुम्हारा न्याय है ? पिता ने भी कोई सुध न ली। दिन-रात इन दुष्ट डाकुओं की बातें सुननी पड़ती हैं। इनकी सूरत देख कर मेरे रोएँ काँप उठते हैं। मैं यही मनाती हूँ कि कब धरती फट जाय और कब मैं उसमें समा जाऊँ। लेकिन भगवान् ! तुम तो मौत भी नहीं देते। अगर छुटकारा नहीं तो फिर मौत ही दे दो। रोज़-रोज़ मरते रहने से एक दिन मर-मिटना बहुत अच्छा है। मैं इस जीते-जागते नरक से तो छुट्टी पा जाऊँगी। प्रभो ! प्रभो ! वही करो, वही करो !

कालू

[बोतल और गिलास लेकर आता है।]

फिर वही प्रभु का आलाप। पागल छोकरी, अब भी मान जा।

[कुछ ठहर कर]

मैं कहता हूँ, अब भी मान जा !

[शराब की बोतल ढालता हुआ]

अब भी मान जा !

[कुछ ठहर कर]

नहीं मानेगी ? अच्छा ले, इसे पी ले, फिर देख, तेरे देवता भी मान जायँगे ।

[बोतल उसके सामने ले जाता है ।]

प्रभा

[कुछ दूर हट कर]

बस, नीच ! नराधम !! अब दूर रहना । मैं समझ गई कि तेरा नाश समीप आगया; क्योंकि तूने अब शैतान का पानी गले के नीचे उतारना प्रारम्भ कर दिया !

कालू

[उन्मत्त-सा होकर]

प्यारी, शराब ! वह कहीं खराब हो सकती है ! क्या रङ्ग आता है कि एक बूँद में तबीयत मस्त हो जाती है ।

प्रभा

आज मैंने समझा कि ईश्वर ने शराब क्यों बनाई । वह चाहता है कि तुम-सरीखे नीच अत्याचारी उस डायन की मीठी छुरी से घायल हो हो कर जल्द ही अपना सर्वनाश बुला लिया करें ।

कालू

चुप बदकार !

[उसकी तरफ़ झपटता है।]

प्रभा

[कमर से कटार निकाल कर]

बस, ख़बरदार !

कालू

[सँभल कर]

ऐं, यह कटार तेरे पास कहाँ से आगई ! कौन तेरा मददगार हो गया ! समझा, समझा ! यह उसी नालायक़ राजकुमार की कारस्तानी होगी। अच्छा, मैं अब नहीं सह सकता। उस बदमाश को आज ही तेरे सामने फाँसी देता हूँ ! कोई है ?

[दो डाकू नङ्गी तलवार लिये आते हैं]

जाओ, फाँसी के तख्ते यहीं लगा दो और उस राजकुमार को ले आओ। उसको फाँसी यहीं दे दी जायगी।

[डाकू अदब से सलाम करके जाते हैं]

प्रभा

दुष्ट ! नीच ! इसके पहिले ही मैं तेरा काम तमाम कर देती हूँ।

[कटार लेकर झपटती है। कालू उसका हाथ पकड़ कर कटार छीन लेता है और आवाज़ देता है।]

कोई है ?

[एक सशस्त्र डाकू आता है।]

लो, इस दुष्टा को खम्भे से बाँध दो।

[डाकू प्रभा को खम्भे से बाँध देता है।]

बोल, बोल, दुष्टा ! अब और मुँहजोरी करेगी।

[डाकू लोग फाँसी के तख़्ते लाते हैं और चन्द्र को भी बन्दी की हालत में वहाँ हाज़िर करते हैं।]

प्रभा

[चिल्ला कर]

नहीं, नहीं, यह कटार मुझे बुधिया से मिली है।

कालू

वह किसी से मिली हो ! मैं तो राजकुमार ही से कसर निकालूँगा। क्यों राजकुमार, अब क्या चाहते हो ?

चन्द्रसिंह

बस, सिर्फ एक तलवार चाहता हूँ और कुछ नहीं। फिर चाहे तुम पच्चीस हो और चाहे पचास।

कालू

अभी यह हविस बाक़ी है? अच्छा, अब फाँसी के तख्ते पर टँग कर बात करना।

[डाकुओं से]

टाँग दो इसको!

प्रभा

ठहरो, ठहरो! इनके बदले मुझे फाँसी पर टँगने दो।

चन्द्रसिंह

[राजकुमारी को देखकर]

हाय, अफ़सोस! मैं तुम्हें छुड़ा न सका! प्यारी राजकुमारी! क्या ईश्वर सचमुच निठुर है!

प्रभा

नहीं, नहीं ! अन्त समय ऐसा न कहो। उसकी भुजाएँ बड़ी विशाल हैं ! उसके रास्ते बड़े अनोखे हैं।

चन्द्रसिंह

अब तो नहीं सहा जाता। मुझे मरने की फ़िक्र नहीं, लेकिन मैं यही अरमान लेकर जाऊँगा कि मैं तुम्हें बचा न सका।

प्रभा

प्यारे, मैं तुमसे अलग होकर इस दुनियाँ में रह ही न सकूँगी। अगर तुम चले तो मैं भी तुम्हारी सेवा के लिये अभी आती हूँ। परन्तु नहीं, क्या मैं बचा नहीं सकती ! ओह, इज्ज़त ! इज्ज़त ! प्रेम ! प्रेम !

[कुछ ठहर कर]

नहीं, अब वह मेरी नहीं, आप की चीज़ हो गई। अब मैं उसे दे कर आप को नहीं बचा सकती।

चन्द्रसिंह

क्या ? क्या तुम मुझसे प्रेम करती हो ?

प्रभा

मैं आपके चरणों की दासी हो चुकी हूँ।

चन्द्रसिंह

तो मैं सुख से मरूँगा। अत्याचार की तलवार जो काम न कर सकी, वह प्रेम के तीरों ने कर दिखाया। अब मैं सुख से मरूँगा। कालू, अब देर क्या है?

कालू

तुम लोगों की बातें ख़त्म हो चुकीं? वाह! मुझे तो मज़ा आ रहा था। बलि के पहले बकरे को घास खिलाने में मुझे मज़ा आया करता है। अच्छा, तो राजकुमार तैयार हो जाओ।

चन्द्रसिंह

मैं तैयार हूँ।

[फाँसी की तैयारी]

मणिसिंह

[एकाएक आकर]

ठहरो।

[फाँसी लगाने वाला डाकू घबरा कर ठहर जाता है।]

कालू

तू कौन ?

मणिसिंह

ईश्वर का दूत।

कालू

यहाँ क्यों आया ?

मणिसिंह

तुझे उपदेश देने।

कालू

क्या कहना है ?

मणिसिंह

यही कि नीच पुरुष ! तू आदमी बन जा। आदमियों का चोला पाकर भी तू आदमियों ही पर अत्याचार के तीर चला रहा है ? ईश्वर की व्यवस्था में बाधा दे रहा है ? नेकी का बदला नेक है, बद का बदी के साथ है। याद रख, यह दुनियाँ चार दिन की सराय है। थोड़े ही दिनों में तुझे वहाँ जाना होगा, जहाँ से तू आया था, वहाँ मालिक के सामने क्या मुँह ले कर खड़ा होगा ?

कालू

[मानों आप ही आप कह रहा हो।]

मेरे तिलस्म में यह कैसे पहुँच गया। तब क्या सचमुच ही ईश्वर कोई चीज़ है ? लेकिन नहीं, दुनियाँ में कई तरह के आदमी और कई तरह के धोखे होते हैं। अगर ईश्वर होता तो हम भंगी लोग इस तरह ठुकराए क्यों जाते ? नहीं नहीं, ईश्वर कोई नहीं। जो कुछ है सो मनुष्य, और उसमें भी जिस की लाठी उस की भैंस। बस, मैं किसी की कुछ न सुनूँगा।

(डाकुओं से)

देखते क्या हो ? लगाओ फाँसी।

[डाकू जड़-मूर्त्ति के समान खड़े रहते हैं।]

एं, क्या देख रहे हो ? मेरा हुक्म क्यों नहीं सुनते ?

एक डाकू

इन बाबा जी ने हमारे हाथ ढीले कर दिये। ये ज़रूर पहुँचे हुए महात्मा हैं। नहीं तो इस तिलस्म में आना सरल नहीं।

कालू

[रोष से]

सरदार से बग़ावत ! ले, इसका मज़ा चख।

[तलवार उसके पेट में भोंक देता है। वह आह कर के गिर जाता है। दूसरे की ओर देख कर]

चलो, फ़ौरन फाँसी लगाओ।

[वह डरता हुआ आगे बढ़ता है।]

विभा

[काली के रूप में एक हाथ में तलवार, दूसरे में खप्पर लिये हुंकार करती पहुँच जाती है।]

कालू

यह क्या ?

[विभा खप्पर की धूनी डाकुओं की ओर ले जाती है। डाकू बेहोश से होकर झूमने लगते हैं। कालू तलवार निकालकर विभा के ऊपर वार करना चाहता है। पीछे से आकर मणि उसके हाथ पकड़ लेते हैं और सामने से विभा अपना खप्पर उसकी नाक पर अड़ा देती है।]

कालू

["ओफ़् धोखा" कहता हुआ बेहोश होकर गिर जाता है। विभा तलवार, खप्पर और नकली जीभ फेंक कर प्रभा को बन्धन-मुक्त करती है और मणि चन्द्र को छुड़ाता है।]

चन्द्र और प्रभा

यह क्या रहस्य है ?

मणिसिंह

सो पीछे मालूम होगा। इस वक़्त धरती हिल-सी रही है। जान पड़ता है भूकम्प लाकर भगवान् ख़ुद ही इन नीचों

को दण्ड देना चाहते हैं। इसलिये झटपट यहाँ से भाग चलिये। बातें पीछे होंगी।

[विभा प्रभा को पकड़ कर और मणि चन्द्र को पकड़ कर खींच ले जाते हैं। चलते-चलते चन्द्र विभा की गिरी हुई तलवार उठा लेते हैं। उन लोगों के निकलते ही पृथ्वी ज़ोर ज़ोर से हिलती है और खोह के ऊपर की चट्टान टूट कर गिर पड़ती है। डाकू दब जाते हैं।]

[सामने का परदा गिरता है।]

अङ्क २

पहला दृश्य

[स्थान—वही ऊसर]

बुधिया

[टहलती हुई अकेली गा रही है ।]

धुन विहाग—ताल दादरा

चले गइले नजरिया लगाइ कै,
हियरा चोराइ कै ना ।
जियरा जराइलूँ कलहूँ न पाइलूँ,
गइले सजन तरसाइ कै ।
हियरा चोराइ कै ना ॥

डाकू तो सब दब मरे; लेकिन वह रसीला वैरागी युवक कहाँ गया ? उसकी कुटी भी तो बेजान-देह के समान ख़ाली पड़ी है ।

[कुछ ठहर कर]

ये दो आदमी कौन आ रहे हैं? कुछ नये-से जान पड़ते हैं।

[उत्सुकता से एक ओर हट कर उनकी तरफ देखती है। अजित और अजबसिंह का प्रवेश।]

अजब

[तिलस्मी खन्दक के लिये नेपथ्य की ओर दृष्टिपात करके]

अरे! यहीं तो वह तिलस्मी महल था। अब वह क्या हो गया? जान पड़ता है, भूकम्प ने उसे मटियामेट कर दिया। तो बेचारा कालू भी सम्भव है, उसीमें दब मरा हो।

बुधिया

इसमें क्या शक है।

[अजब और अजित दोनों चौंक कर उधर देखते हैं।]

अजित

तुम कौन?

बुधिया

मैं कालू की घर वाली।

अजब

तू और कालू की घर वाली ? यह कैसा व्यापार ! तू कहती है कि वह दब मरा और तू इस तरह मौज से खड़ी मुस्कुरा रही है ?

बुधिया

यही तो दुनियाँ है। आप लोग कालू के दोस्त हैं, इस लिये जरूर कोई डाकू होंगे। अब आप ही लोग अपने ईमान से बताएँ कि आप कालू के साथ क्यों हमदर्दी दिखा रहे हैं ? इसीलिये न कि वह आपकी बहुत मदद करता था, आप को डाके का माल देता था, संकट पड़ने पर आपके लिये अपनी जान पर भी खेल जाता था ? मेरे लिये उसने क्या किया ? ब्याह कर छोड़-सा दिया, और आप एक राजकुमारी को लिये हुए इस तिलस्म में पड़ा रहा। बेचारी ने अपने बचाव के लिये मुझ से आज ही कटारी माँगी थी। भगवान ने उन सब को एक साथ ही उठा लिया। अच्छा ही हुआ। हिन्दू-समाज की एक कन्या डाकुओं से छू गई थी, इसलिये अब उसे कौन छूता ? हिन्दू-समाज का एक अंग डोम होकर डाकू बना था,

इसलिये अब उसे कौन पनाह देता ? भगवान ने उन दोनों को बुला लिया—एक की रक्षा करने और दूसरे को दण्ड देने। मैं उन लोगों के लिये नाहक़ क्यों चिन्ता में पड़ूँ ? भगवान ने मुझे रूप दिया है, गुण दिया है, उमंग दी है, और इस भूकम्प में ज़िन्दगी भी बख़्श दी है। फिर मैं क्यों न मुस्कुराऊँ ?

अजित

क्या राजकुमारी भी मर गई ?

बुधिया

मर गई होगी। मुझे इतनी फ़ुरसत कहाँ कि मैं इस बात पर कुछ विचार करूँ ?

अजित

हाय !

अजब

आज मैं यह क्या देख रहा हूँ ? मैं यह क्या सुन रहा हूँ ? कालू नास्तिक था। उसी की घर वाली ने मुझे आज

परम आस्तिक बना दिया। इसकी बातें सुन कर मानों मेरी आँखों का परदा खुल गया। मैं ईश्वर की सत्ता प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। शहर में सब खैरियत है। कहीं कोई घर नहीं गिरा। किसी पुराने घर की कोई दीवार भी न दरकी। लेकिन यहाँ किस शान की बनी पक्की तिलस्मी खोह एकदम गिर कर मिट्टी में मिल गई। डाकू, तू मनुष्यों पर डाका कर सकता है, लेकिन ईश्वर पर नहीं। हाय, हम लोग त्याग की महिमा नहीं समझ सकते। अन्न के पौधे फलों का भार हमारी तरफ़ झुकाते हैं, पर हम उन फलों को लेकर उन पौधों को धन्यवाद नहीं देते। सूर्य्य और चन्द्र अपनी रोशनी हमारे ऊपर बरसाया करते हैं, पर हम उन्हें कभी किसी प्रकार का आदर नहीं देते। नदियाँ पहाड़ों से ला-लाकर हमें मीठा जल पिलाया करती हैं, लेकिन हम इस रहस्य को समझने की कभी चेष्टा नहीं करते। हम तो समझते हैं कि हमने फलों पर डाका डाला, रोशनी पर डाका डाला, पानी पर डाका डाला। भगवान ने हमारे लिए क्या-क्या चीजें नहीं दीं? सभी तो दिया है। फिर भी हम दूसरों का अधिकार छीनने के लिये—डाका डालने के लिये—हर दम तैयार रहते हैं।

इसीलिये तो मनुष्य हमें डाकू कहते हैं और दण्ड देते हैं। जब मनुष्य दण्ड नहीं दे सकते तो ईश्वर दण्ड देता है।

अजित

मित्र अजब सिंह, तुम तो दार्शनिकता बघार रहे हो और मेरे सब अरमान ही चौपट हुए जा रहे हैं।

अजब

[मानों सुना ही न हो]

मेरा इस समय बड़ा अजब हाल हो रहा है। कालू की ऐसी मौत और उसकी घर वाली की ऐसी विरक्ति देख कर मैंने मानों दुनियाँ का सच्चा रंग ही देख लिया। देखिये अजित सिंह जी ! लोग पाप की गठड़ी क्यों लादते हैं ? इसी ख्याल से तो कि वे सुख से रहें, और उनके घर वाले सुख से रहें ? अब आप ही बताइये, कालू ने क्या सुख उठाया और उसके घर वालों ने क्या सुख उठाया ?

अजित

उन बातों को छोड़ो भाई ! कोई उपाय करो जिसमें यह खोह झटपट खोदी जा सके। शायद राजकुमारी ज़िन्दा निकल आये।

बुधिया

वाहरे मनुष्य, रूप की आग में एक तो जल चुका, अब शायद यह दूसरा जलने को तैयार है।

अजित

चुप छोकरी ! बड़-बड़ न कर ! तू जानती नहीं कि मैं कौन हूँ ?

अजब

ठीक तो कहती है भाई ! डाके का यह ईश्वरीय दण्ड देख कर भी तुम अभी अपनी ही इच्छा पर अड़े हुए हो ? तुम्हें चाहिये था कि तुम इस वक्त आँखों में आँसू भर भगवान् से माफ़ी माँगते और अपने गुनाहों पर तोबा करते। अफ़सोस तुम्हें अक्ल कब आयगी।

[ऊपर देख कर]

भगवन् ! हम कमज़ोर हैं, इसीलिये पापी हैं। हम अपने को ताक़तवर समझते हैं, इसीलिये अत्याचारी हैं। क्या हमारे पाप और अत्याचार देख कर तुम हमें कभी न अपनाओगे ? नहीं प्रभु ! ऐसा न करो। कितना भी हो, आख़िर हम तुम्हारे बच्चे हैं।

धुन छायानट—ताल रूपक

तेरे ही बन्दे हम सब हैं तुही मालिक हमारा है,
रहम कर ऐ रहम वाले ! मुझे तेरा सहारा है।
　　ज़मीं में तू फ़लक में तू ज़माने में भी तू हरदम,
　　जहाँ में सब तरफ़ तेरा ही जलवा आशकाना है ॥
गुनाहों से ही तो रहमत अजब कुछ शान पाती है,
नहीं क्या ख़ल्क में मुजरिम इसी से तुमको प्यारा है ?
　　अगर इन्सान नाफ़हमी से तुमको भूल जाता है,
　　रहम फिर भी हो आख़िर वह फ़क़त बच्चा तुम्हारा है।
गुनह बख़्शो रसाई दो गदा बन दर पै आया हूँ,
मुझे भी तार दो जैसे हज़ारों तुमने तारा है ॥

[गाता हुआ चला जाता है।]

अजित

[पीछा करता हुआ]

भाई, भाई, कहाँ चले ! अफ़सोस !

(जाता है।)

बुधिया

हँ हँ हँ, अद्भुत मनुष्य थे। मैं क्या उस राजकुमारी से कम थी? ये लोग तो अपनी ही हाय हाय में पड़े रहे। मुझसे बात तक न की। वह बैरागी भी नहीं आया! पुरुष जाति ही ठहरी। किसका विश्वास किया जाय! तो फिर जाऊँ चौपट ही का घर आबाद करूँ।

[जाती है। परदा उठता है।]

दूसरा दृश्य

[स्थान चौपट के घर का कमरा]

(बुद्धू और चौपट बातें कर रहे हैं)

बुद्धू

तो क्या सचमुच वह तुम्हारी लड़की थी ?

चौपटचन्द

यक़ीन कीजिये सेठ जी ! वह मेरी ही मुँहबोली इकलौती बच्ची थी ! हाय री मेरी दुधमुहीं बच्ची !

[रोनी सूरत बनाता है ।]

बुद्धू

तो उसने डाकू-सरदार को "स्वामी" कैसे कहा ?

चौपटचंद

भाई साहब, "वक्त़ पड़े बाँका तो गधे को कहे काका ।"

बुद्धू

तो वह उसके साथ चली क्यों गई ?

चौपटचन्द

बस, यही तो मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है। शरीफ़ घराने की लड़की हो कर उसने इस बेहयाई का काम कैसे किया ?

बुद्धू

अब अगर वह मिल भी जाय, लौट भी आवे तो अपने काम की न रही। डाकुओं ने उसे छू लिया। वह तो एकदम छूत हो गई।

चौपटचन्द

मेरी भी यही राय है सेठ जी ! एकलौती बेटी हुई तो क्या हुआ ? मैं तो अब उसका मुँह तक न देखूँगा। पर-पुरुष की छाया तक छू जाने से स्त्रियाँ अपवित्र हो जाती हैं, फिर डाकू के साथ चल देना तो एकदम ग़ज़ब की बात हो गई।

अब चाहे, वहाँ उन दोनों का व्यवहार भाई-बहिन ही सा रहा हो; लेकिन अपने लेखे तो लड़की पानी में डूब गई।

बुद्धू

मैं इस मामले में बड़ा कड़ा हूँ चौपटचन्द जी! अब उस लड़की को किसी हालत में नहीं रख सकता। वह कितनी भी सफ़ाई दे; लेकिन मेरे लेखे तो मर चुकी।

चौपटचन्द

इसमें क्या शक़ है। मैं भी तो यही कहता हूँ। अब उसको आप कभी इस हाते में न पावेंगे। आप के लिये तो मैंने अब अपनी मौसेरी लड़की को बुलाया है। वह बहुत ठीक होगी। देखने-सुनने में अच्छी है। पढ़ी-लिखी भी है। और कुछ-कुछ नाचना भी जानती है।

बुद्धू

अरे यह गाना-नाचना तो बाई जी लोगों का काम है।

चौपटचन्द

आजकल भले भले घर की बहू-बेटियाँ भी इस ललित कला को सीखने लगी हैं सेठ जी!

बुद्धू

अच्छा तो क्या मैं उसे देख सकता हूँ ?

चौपटचन्द

ज़रूर ।

[भीतर की ओर आवाज़ देकर]

ओ बेटी, जनकदुलारी !

[आवाज़ आती है—"आई पिता जी !"]

बुद्धू

यह क्या ?

चौपटचन्द

यह मुझको बाप ही कहती है ।

[एक वेश्या लजीली कुमारी बन कर आती है ।]

बुद्धू

[ग़ौर से देख कर]

माल तो बढ़िया है । लेकिन ज़रा गाना भी सुन लूँ ।

चौपटचन्द

बहुत अच्छा। बेटी, ये अपने मेहमान हैं, ज़रा इन्हें एक गाना तो सुनाओ। और नाच भी दिखा दो। ये बड़े कलाकार हैं। इसलिये इनके आगे अपना हुनर दिखाने में न शर्माना।

[पुचकारने की-सी आवाज़ करता है।]

वेश्या

[मुस्कुरा कर]

जो आज्ञा।

[गाती है और बीच बीच में नाचती है।]

धुन जिला—ताल दादरा

तेग़े अदा तनी रहे मेरा येदिल नज़र भी है,
उसको जो वार का है शौक़ शौक़े जिबह इधर भी है।
हिज्र में मार मार के वस्ल में फिर जिला दिया,
आँखों में तेरी ऐ सनम ! ऐब भी है हुनर भी है॥
ख़ूबी के बहर में फँसा दिल वहीं रहना चाहता,
रुख़ पै नमक भरा है ख़ूब लेकिन लबे शकर भी है।

अब्र की आँखों से फ़लक रो देगा देख के सितम,
कब्र को ठोकरें न मार इसमें दिलो-जिगर भी है।
चुप जो रहूँ तो दिल मेरा रहता है बेक़रार ख़ूब,
नाले करूँ तो वह सनम रुसवा न हो ये डर भी है॥

बुद्धू

[मस्त होकर]

चीज़ तो चोखी है।

चौपटचन्द

[वेश्या से]

क्या तुम इन कलाकार महोदय को—इन उस्ताद जी को पसन्द करती हो?

वेश्या

[मुस्कुराकर नख़रे से]

जी हाँ।

चौपटचन्द

अगर ये तुम्हारे साथ शादी करना चाहें?

वेश्या

[प्रसन्नतापूर्ण लज्जा का नाट्य करते हुए]

मुझे तो शरम आती है, मैं भागी जाती हूँ।

[जाते जाते बुद्धूमल की ओर एक कटाक्ष करती जाती है।]

बुद्धू

[बेताब होकर]

ज़रा ठहरो, ज़रा सुनो तो। आह, चली ही गई।

चौंपटचन्द

सेठ जी! बेताब क्यों हो रहे हैं? क्या जानते नहीं कि अभी वह कुमारी है। व्याह के बाद चाहे जैसी बातें कीजियेगा।

बुद्धू

तो बस भाई, दाम बोल दो। अब मैं भी अपना बचा-खुचा धन ऐयाशी में फूँक बहाऊँगा। डाकुओं के लिये न जमा करूँगा।

चौपटचन्द

बस, पहिली लड़की से दूने दाम।

बुद्धू

[घबरा कर]

यह क्यों ?

चौपटचन्द

क्योंकि वह धन लेने वाला मैं ही अकेला था। अब इसमें लड़की का असल बाप भी साझीदार है।

बुद्धू

उतना ही ले लो।

चौपटचन्द

यह नामुमकिन है।

बुद्धू

अच्छा तो डेढ़ा ले लो।

चौपटचन्द

यह भी नामुमकिन है।

बुद्धू

दोस्त! तुमने मुझे उस खम्भे से छुड़ाया, जिसमें मैं बाँध दिया गया था, इसलिये तुम्हारी ख़ातिर मैं दूनी कीमत दूँगा, लेकिन अब शादी का झटपट इन्तज़ाम करो।

चौपटचन्द

बस, कल ही लीजिये।

बुद्धू

तो क्या चलते चलते एक बार फिर दर्शन न कराओगे?

चौपटचन्द

क्यों नहीं!

[आवाज़ देकर]

बेटी जनकदुलारी!

[भीतर से आवाज़—"अब मैं नहीं आऊँगी"।]

नहीं बेटा, अपने मेहमान के लिये पान तो ले ही आओ।

[आवाज़—"आप ख़ुद ले जाइये"]

हम लोग नहीं आ सकते। कुछ पैर में मेंहँदी नहीं लगी है। जल्द लाओ।

बुद्धू

वाह, आप तो डाँटने लगे। ऐसी दूध-फूल-सी लड़कियों को भी कोई डाँटता है? वाह, चलो न भीतर ही चले चलें।

[वेश्या लज्जा का नाट्य करती हुई, पानों की तश्तरी लाती है और बुद्धूमल को पान देने के समय तश्तरी गिरा कर भाग जाती है।]

बुद्धू

[पानों इत्यादि को बड़े प्रेम से समेट कर अपनी पगड़ी के छोर में बाँधते हुए]

भाई चौपटचन्द जी, इन पानों में उसके हाथों की लाली बस गई है। इसलिये मेरे लिये ये अनमोल बन

गये हैं। मैं मज़ा ले लेकर इन्हें अपने पोपले मुँह में चक्कर दिलाऊँगा।

[हँसता है।]

अच्छा तो भाई साहब, अब इजाज़त दीजिये।

[हाथ मिला कर जाता है। चौपट दरवाज़े तक पहुँचा आता है।]

वेश्या

[शीघ्र आ कर]

मुआ, अब भी काफ़ी मालदार है। अच्छी मछली फँसी है। जो लोग कोठे पर जाने से हिचकते हैं, उनके लिये इसी तरह घर पर फन्दे लगाने पड़ते हैं।

चौपटचन्द

बाई साहबा, आपने भी इस नाटक में अपना पार्ट बड़ी ख़ूबसूरती के साथ अदा किया।

[दरवाज़े पर खटखटाहट]

चौपटचन्द

कौन है ?

[बाहर से आवाज़]

कौन चौपटचन्द जी, किवाड़ तो खोलिये, मैं हूँ। क्या इतनी जल्दी भूल गये ?

चौपटचन्द

[ज़रा घबरा कर वेश्या से]

अच्छा सुन्दरबाई, जरा अन्दर तो हो जाइये।

[सुन्दर जाती है। चौपट किवाड़ खोलता है। और बुधिया भीतर आती है।]

बुधिया

[नख़रे से]

मेरे प्राणेश्वर !

चौपटचन्द

अरे, तुम तो डाकुओं के साथ भाग गई थी ?

बुधिया

मैं डाकुओं पर डाका डालने गई थी। भगवान् ने भूकम्प में उन सब को सज़ा दे दी। उनका सब माल भी दफ़न हो गया। सिर्फ मैं ही बची, सो अब तुम्हारा घर आबाद करने आई हूँ प्यारे, अपने वादे का ख्याल करो।

चौपटचन्द

तुम यह क्या बातें कर रही हो। कहाँ का वादा और कैसा घर ?

बुधिया

[चमक कर और तेवर बदल कर]

एं, क्या अब यह भी होगा ? आख़िर पुरुष हो पुरुष ! वेश्यायें ठीक ही करती हैं, जो तुम लोगों को फँसा-फँसा कर गड्ढे में गिराया करती हैं।

चौपटचन्द

ज़रा धीरे बोल भवानी !

बुधिया

मैं और धीरे बोलूँ ? वह भी उस समय जब दिल जल रहा हो ? मैं सुना-सुना कर कहूँगी धोखेबाज़ ! आसपास कोई सुनने वाला हो तो वह भी सुन ले ।

[दौड़ कर बुधिया का मुँह बन्द करता हुआ]

चौपटचन्द

भागती है कि नहीं यहाँ से हरामज़ादी !

बुधिया

[चुटीली नागिन की तरह रोष से]

यह अपमान ! मैं इसका बदला ज़रूर लूँगी ।

चौपटचन्द

[उसे धक्का देकर बाहर करता हुआ]

हट चुड़ैल !

[ढकेलता हुआ बाहर ले जाता है ।]

[परदा उठता है ।]

तीसरा दृश्य

[स्थान वन-पथ—चन्द्र, मणि, प्रभा और विभा आती हैं।]

चन्द्रसिंह

विभा! तुम गोरी से काली ख़ूब बनीं।

विभा

क्या करूँ, चन्द्रशेखर जी की आज्ञा ही ऐसी थी!

चन्द्रसिंह

[मणि से]

भाई मणि! विभा ने तो इस एक ही जवाब में हम दोनों को लाजवाब कर दिया।

मणिसिंह

क्यों न हो, आख़िर सरस्वती जी के गोत्र की हैं न?

प्रभा

विभा की बहादुरी में आप अपना गौरव समझ रहे हैं। क्यों? अभी से एक प्राण हो गये?

चंद्रसिंह

तो क्या एक प्राण दो देह बनने के लिये कोई मुहूर्त देखना पड़ता है ?

प्रभा

लो, अब आप भी उनकी मदद के लिये आ पहुँचे ? आपको तो चाहिये था कि आप मेरी मदद करते, ठीक उसी तरह जैसे भाई मणि ने बहन विभा की मदद की है !

मणिसिंह

आपकी ठठोलियाँ इतनी लाजवाब हैं कि आपको किसी की मदद की ज़रूरत नहीं।

विभा

तो हार मानिये।

मणिसिंह

हम लोग आप लोगों से सदा हारे हैं। इन प्रेम के तीरों में वह ताक़त है कि सिर्फ़ एक तिर्छी चाल पर

बड़े-बड़े जवाँमर्द मुँह की खा जाते हैं। सीधी चाल पर तो क़यामत ही हो जाय !

चंद्रसिंह

ऐसा न कहो भाई मणि ! शक्ति के तीर एक हृदय के दो टुकड़े कर देते हैं, प्रेम के तीर दो हृदयों को जोड़ कर एक कर देते हैं। शक्ति के तीरों में हार-जीत है, प्रेम के तीरों में दोनों ओर जीत ही जीत है। शक्ति के तीरों में अत्याचार छिप सकता है, प्रेम के तीरों में त्याग और सेवा साथ चलती है। मैं समझता था कि शादी अपनी बरबादी है और नारी एक विषबुझी कटारी है। उसका रूप एक भूचाल है, जो धैर्य्य की इमारत को गिरा कर तहस-नहस कर देता है। उनका प्रेम एक बवण्डर है, जो कर्तव्य को उड़ा कर मनुष्य को मटियामेट कर देता है। लेकिन मैंने अब समझा कि यदि कोई सच्ची अर्द्धांगिनी मिल गई तो हृदय में कितना असीम उत्साह भर जाता है, कर्तव्य की ओर कितनी सच्ची लगन हो उठती है, आत्मा कितना सबल हो कर सुख और शांति के साथ जगत् के कल्याण में लग सकता है।

भैरवी—ताल कहरवा

भाई ! प्रेम के तीरों से हारा।
मैं हूँ प्रेम के तीरों से हारा ॥
मैं तो प्रेम के०—
प्यारी प्रभा की प्यारी प्रभा से
पाया प्रकाश है प्यारा।
जीवन रसमय हुआ है पाकर
प्रेम की पावन धारा।
प्रेम ही जप है प्रेम ही तप है
प्रेम ही जीवन-तारा।

प्रभा

आप तो गंभीर हो चले !

विभा

पुरुष हैं न ?

[धरो, पकड़ो, मारो की आवाज़ के साथ चार-छः सैनिकों को लेकर अजित का प्रवेश।]

चन्द्रसिंह

[तलवार निकाल कर]

कौन ?

अजितसिंह

मैं, मालवा-नरेश अजितसिंह ।

प्रभा

हाय मैं मरी, मरी ।
[घबराकर बेहोश होना चाहती है । विभा पकड़ लेती है ।]

मणिसिंह

[विभा से]

क्या माजरा है ?

विभा

ये सखी प्रभा से ज़बरदस्ती शादी करना चाहते थे ।

मणिसिंह

हूँ।

[तलवार निकाल कर आगे बढ़ते हुए।]

यहाँ आप क्यों आये ?

अजितसिंह

राजकुमारी प्रभा को ज़बरन ले जाने के लिये। मैंने तुम लोगों को जाते देखा, इसीलिये अपने सैनिक लेकर यहाँ पहुँच गया हूँ। तुम लोग कोई भी हो लेकिन अपनी जान की ख़ैर चाहते हो तो प्रभा और विभा को मेरे हवाले कर यहाँ से चले जाओ।

चन्द्रसिंह

शर्म करो राजन्, शर्म करो। मैं भी कन्नौज का राजकुमार हूँ। मैं अपने कानों राजाओं के मुँह से ऐसी नीच बातें नहीं सुनना चाहता। तुम राजा हो, ईश्वर के प्रतिनिधि हो, प्रजा के धन और जन के संरक्षक कहे जाते हो। तुम्हारे ये विचार ! तुम्हारी यह नीचता !!

अजितसिंह

बस बस, युवराज ! बढ़-बढ़ कर बातें न करो। तुम्हें यह अधिकार नहीं कि तुम मुझे उपदेश दे सको। मेरी बात जल्द मानो, नहीं तो अपनी ज़िन्दगी से हाथ धोना पड़ेगा।

चन्द्रसिंह

यदि मेरा उपदेश न मानोगे तो मेरी तलवार का उपदेश मानना ही पड़ेगा। दुराचारी नरेश ! तुम्हारे ही समान नीच प्रकृति के लोग सम्पूर्ण राजवंश पर कलङ्क की कालिमा लगा देते हैं। और प्रजा को बाग़ी बना डालते हैं।

अजितसिंह

तू सीधी तरह न मानेगा ?

[सिपाहियों को देख कर]

सिपाहियो ! ले भागो उन दोनों लड़कियों को।

मणिसिंह

[तलवार आगे बढ़ा कर]

ख़बरदार !

चन्द्रसिंह

भाई मणि ! इन सातों आदमियों के लिये मैं अकेला ही बहुत काफ़ी हूँ। तुम इन बालिकाओं की रक्षा में ही रहो।

विभा

हा, यदि हम भी शस्त्र चलाना जानतीं !

अजितसिंह

[चन्द्रसिंह से]

अच्छा तो ले, पहिले तू ही हट।

[तलवार का वार करते हैं।]

चन्द्रसिंह

[पैंतड़े से वार बचा कर]

ख़बरदार !

[प्रहार करते हैं। सैनिक "मारो, मारो" कह कर चन्द्र की ओर दौड़ पड़ते हैं। चन्द्र अकेले ही उन सातों से लड़ कर छहों सैनिकों को मार भगाते हैं और अजित से युद्ध कर उसे निःशस्त्र करके गिरा देते हैं तथा छाती पर अपना एक पैर रख कर तलवार उसकी गर्दन पर खड़ी करते हैं।]

क्यों, भोंक दूँ यह तलवार ?

अजितसिंह

क्षमा, राजकुमार ! क्षमा !

चन्द्रसिंह

तुम क्षमा के पात्र नहीं।

[उसकी आँखों से आँखें भिड़ा कर उग्रता से देखते हैं।]

अजितसिंह

[दुःख से]

अफ़सोस, तुम्हारी स्थिति में मैं होता तो मैं शायद और भी कड़ा व्यवहार करता। मैं किस मुँह से क्षमा माँग रहा हूँ ! मित्र अजब सिंह के उपदेशों ने भी मेरे हृदय पर

कुछ असर नहीं किया। हा! यह पापी शरीर ले कर मैं इस दुनियाँ में जीना नहीं चाहता। राजकुमार! तुम मुझे अवश्य मार डालो।

चन्द्रसिंह

राजा साहब, मैं तुम्हारी इन चिकनी-चुपड़ी बातों के चक्कर में आने वाला नहीं। मैं अवश्य ही तुम्हें दण्ड दूँगा। तुम अत्याचारी हो। अत्याचारी के हाथ में प्रजा के शासन की बागडोर रहने देना ठीक नहीं है। निश्चय ही तुम्हारी प्रजा त्राहि त्राहि कर रही होगी। अपने लिये नहीं तो कम से कम तुम्हारी प्रजा के लिये निश्चय ही मैं तुम्हें दण्ड दूँगा।

[मणि से]

मणि! इन्हें उस झाड़ से बाँध दो। मैं अपने तीरों से इनके एक एक अङ्ग काटूँगा। सादी मौत इनके लिये नहीं है।

मणिसिंह

परन्तु भाई ... ...

चन्द्रसिंह

बस, खबरदार ! इस समय मैं युवराज हूँ। भाई-साई कुछ नहीं।

प्रभा

प्राणनाथ !... ...

चन्द्रसिंह

बस प्रिये ! इस समय मेरे कर्तव्य में बाधा न दो।

अजितसिंह

मुझे मारो। मेरी बोटी-बोटी कुत्तों से नुचवा डालो। मैं जानता हूँ कि उसमें वह पीड़ा न होगी जो इस समय पश्चात्ताप के कारण मेरे हृदय को मिल रही है।

चन्द्रसिंह

मणि ! देखते क्या हो ?

[मणि अजित को उठा कर झाड़ से बाँध देते हैं। अजित बिना कुछ बोले चुपचाप बँध जाते हैं।]

[सामने धनुष-बाण सीधा कर]

बस, सँम्हल जाओ।

अजितसिंह

[आँखें बन्द कर]

हे भगवान, मैं जन्म-भर पापी रहा, अब किस मुँह से क्षमा माँगूं !

चन्द्रसिंह

[धनुष-बाण फेंक कर और अजित के पैर पकड़ कर]

राजन्, आपको जो कष्ट हुआ उसके लिये क्षमा कीजिये।

अजितसिंह

[आँखें खोल कर]

यह कैसा व्यवहार ! मैं तो मौत चाहता हूँ।

चन्द्रसिंह

मैं आपके हृदय की केवल परीक्षा-भर कर रहा था। मैं आपको मारना कदापि न चाहता था। आपके उद्गार

सच्चे हैं या कच्चे, इतना ही देखना था। अब आप स्वतन्त्र हैं।

[मणि से]

बन्धन खोल दो भाई मणि ! और

[मणि तथा प्रभा से]

मेरे रूखे व्यवहार के लिये मुझे क्षमा करो। उस समय मैंने वही उचित समझा था।

प्रभा

धन्य हैं प्राणनाथ !

मणिसिंह

[बंधन खोलते हुए चन्द्र से]

ग़ज़ब किया भाई चन्द्र ! आख़िर आप कुलीन राजवंश ही के तो हैं। उस वंश का अपूर्वत्व इस प्रकार होना ही चाहिये। आपका अभिन्न-हृदय मित्र होते हुए भी मैं चक्कर में पड़ गया।

चन्द्रसिंह

[अजित से]

जाइये महाराज, और अपने पवित्र कृत्यों से पिछली अपवित्रतायें धोने का प्रयत्न कीजिये। आप प्रजा के अभिभावक और संरक्षक हैं, उनके भक्षक नहीं। यह सदैव स्मरण रखिये कि यह संसार ही सब कुछ नहीं है। जगत्पिता ने आपको राजकुल में जन्म देकर एक बड़ी ज़िम्मेदारी दी है। जिस समय आप फिर उसके सामने पहुँचेंगे, वह आपसे कैफ़ियत तलब करेगा और देखेगा कि आपने उसकी दी हुई बुद्धि और शक्ति को किस तरह ख़र्च किया।

अजितसिंह

युवराज! तुम्हारी इन तेज-भरी आँखों ने मुझे मेरा भविष्य एकदम दिखा दिया! ढहे हुए तिलस्म ने, मरे हुए कालू ने, बेपरवाह बनी हुई बुधिया ने और संन्यासी बन जाने वाले दोस्त अजबसिंह ने जो असर न पैदा किया, वह आपकी आँखों ने, आपके इस सच्चे उपदेश ने, आपकी इस असीम क्षमा ने कर दिखाया। आज मैंने जाना कि

शक्ति के तीर प्रेम के तीरों के आगे कितने फीके हैं। आपने ज़िन्दगी बख़्श कर मुझे मौत से भी कड़ा दण्ड दिया है। लेकिन मैं इसे ख़ुशी से मंज़ूर करता हूँ, इसलिये नहीं कि मैं इस दुनियाँ में फिर ऐशो-इशरत के सामान इकट्ठे करूँगा, बल्कि इसलिये कि अपने गये-गुज़रे काले कारनामों पर आठ आठ आँसू बहाया करूँ, और आगे का रास्ता ठीक करने की कोशिश किया करूँ। प्रभा आज से मेरी बेटी है और आप मेरे गुरु। आशीर्वाद दीजिये कि मैं अपने इन विचारों में दृढ़ रहूँ।

[साष्टांग दण्डवत करता है। चन्द्र प्रेम से उसे उठाकर छाती से लगा लेते हैं।]

[परदा गिरता है।]

चौथा दृश्य

[स्थान—सड़क।]

थैला

आक छिः, धत्तेरे की ! सेठानी चली गई। सेठ की नौकरी चली गई। लेकिन हरामजादे नजले ! तू अभी तक न गया।

बुधिया

[आकर]

कौन, थैला ?

थैला

कौन, मेरी प्यारी सेठानी जी ?

बुधिया

क्या तू भी मुझे प्यारी कहने लगा ?

थैला

मेरे सेठ की प्यारी सो मेरी प्यारी! इसमें क्या ऐब हो गया ?

बुधिया

तो क्या सेठ की लुगाई तेरी लुगाई हो जायगी ?

थैला

ऐसा हो जाय तो मेरी क़िस्मत ही खुल जाय, लेकिन मैंने इतनी दूर की बात नहीं सोची थी सेठानी जी, माफ़ करना!

बुधिया

और अगर इतनी दूर की बात सोच ही ली तो क्या कोई हर्ज है ?

थैला

[हाथ हिलाता हुआ]

बिलकुल नहीं, बिलकुल नहीं।

बुधिया

तो क्या तू मुझको अपनी औरत बनायेगा ?

थैला

[उत्कंठा से देखता हुआ]

क्या सच !

बुधिया

नहीं झूठ !

थैला

नहीं नहीं, प्यारी सेठानी, क्या सच ?

[आगे बढ़ कर प्रेम जताता हुआ-सा खड़ा होता है ।]

बुधिया

नहीं नहीं, बिलकुल झूठ । हट मुए ! तुम सब आदमी एक बराबर हो ।

थैला

नहीं प्यारी, मैं दूसरे ही मसाले से बना हुआ हूँ ।

बुधिया

मुझ को सेठ ने खेद दिया।

थैला

तो मैं पनाह दूँगा।

बुधिया

मुझको चौपट ने चौपट किया।

थैला

तो मैं तेरे दिल का बाग़ सरसब्ज़ कर दूँगा।

बुधिया

मैं भङ्गिन हूँ।

थैला

तो कोई परवाह नहीं, मैं भी पासी था। आजकल नई रोशनी वालों ने जात-पाँत-तोड़क-मण्डल बना रक्खा है। जातियाँ सब आदमियों की बनाई हैं। हम लोग तो सब के सब ही हरिजन हैं। समझी !

बुधिया

मैं दस जगह घूम चुकी हूँ।

थैला

उन बातों पर परदा डाल कर इस थैले में समा जा। समाज-सुधारक लोग इस बात की भी अब कोई परवाह नहीं करते।

बुधिया

तेरे यहाँ खाने को क्या होगा?

थैला

[सिर खुजाता हुआ]

यही तो टेढ़ी खीर है।

बुधिया

कोई परवाह नहीं। हम लोग मिहनत-मज़दूरी करके पेट पाल लेंगे; लेकिन जिन्दगी तो सुख से बीतेगी।

थैला

[खुश हो कर आगे बढ़ता हुआ]

तब तो

[गाने के ढंग पर]

आओ प्यारी लगा लूँ गले से तुझे...

बुधिया

ठहरो-ठहरो, अभी मेरा एक काम बाक़ी है। मैं चौपट को झाड़ू लगाना चाहती हूँ, बुद्धूमल को अक़्ल देना चाहती हूँ, और तब फिर तुम्हारे साथ रहना चाहती हूँ। मुझे तुम्हारी मदद की ज़रूरत होगी।

थैला

मैं हर तरह तैयार हूँ।

बुधिया

अच्छा तो चलो, जैसा-जैसा मैं बताऊँ, वैसा-वैसा करना।

थैला

जो आज्ञा भवानी ! चलो ।

[दोनों जाते हैं । परदा उठता है ।]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान : कन्नौज-राज-सभा]

[सूर्य्यसिंह, प्रभाकरसिंह, चन्द्रसिंह, मणिसिंह और मुसाहिब बैठे हैं।]

चोबदार

[आकर अभिवादन के बाद]

महाराज! उज्जैन-नरेश का एक मनुष्य बाहर खड़ा है। वह कहता है कि महाराज ने सुना है, राजकुमारी प्रभा को मुक्त करके कुमार चन्द्रसिंह कन्नौज की ओर गये हैं; इसलिये वे भी इसी ओर आ रहे हैं।

सूर्य्यसिंह

आह! आनन्द पर आनन्द! चारों ओर आनन्द! बेटा चन्द्र, क्या राजकुमारी को मुक्त करके तुम पहले उज्जैन नहीं गये?

चन्द्रसिंह

पिता जी, एक तो उस स्थान से उज्जैन बहुत दूर था और कन्नौज बहुत नजदीक। दूसरे राजकुमारी की भी यही इच्छा हुई कि उज्जैन के पहिले कन्नौज ही देखें। मेरा विचार था कि आप के दर्शन करके तथा रक्षा के प्रबन्ध के लिये पूरे आदमी लेकर मैं स्वयम् ही राजकुमारी को उज्जैन छोड़ आऊँ। लेकिन अब तो उज्जैन-नरेश स्वतः ही इस ओर आ रहे हैं।

प्रभाकर

यदि वे न भी आते तो आप को यह कष्ट न उठाना पड़ता युवराज! राजकुमारी स्वतः ही अब उज्जैन न जाना चाहेंगी।

चन्द्रसिंह

मुझे अधिक न बनाइये मंत्री जी, मैं इन बातों को सुन कर और उन पिछली बातों को याद कर पिता जी के सामने लज्जित होता हूँ।

सूर्य्यसिंह

नहीं, नहीं बेटा, लज्जित न हो। यदि सबेरे का भूला शाम को भी घर आ जाय तो उसे भूला हुआ नहीं कहते।

चोबदार

[आकर]

उज्जैन-महाराज देवसिंह पधारे हैं।

सूर्य्यसिंह

मंत्री जी, आदर-सहित लिवा लाइये।

मंत्री

जो आज्ञा।

[जाते हैं और लिवा लाते हैं। सूर्य्यसिंह ताज़ीम के साथ उनका सत्कार करते और बराबरी पर बैठाते हैं।]

चन्द्रसिंह

युवराज चन्द्रसिंह श्री-चरणों में प्रणाम करता है।

मणिसिंह

मंत्रि-पुत्र मणिसिंह श्री-चरणों में प्रणाम करता है ।

देवसिंह

कौन, बेटा चन्द्र और मणि ! आह, तुम दोनों ने मेरी लज्जा रख ली । कहाँ हैं बेटी प्रभा और विभा ?

सूर्य्यसिंह

मंत्री जी, कुमारियों को सादर लिवा लाइये ।

मंत्री

जो आज्ञा ।

[जाते हैं ।]

देवसिंह

महाराज, जिस तरह आपके बालकों ने मेरी कन्याओं का उद्धार करके मेरी इज्जत बचाई है, उसी तरह आप भी मेरा सम्बन्ध स्वीकार करके इन कन्याओं की चिन्ता से मुझे मुक्त कीजिये ।

सूर्य्यसिंह

नेकी और पूछ पूछ ! महाराज, यह प्रस्ताव तो मैं स्वतः ही करने वाला था।

[मन्त्री दोनों कन्याओं को लेकर आते हैं और चन्द्र तथा मणि के सामने की दो कुर्सियों पर बैठा देते हैं।]

प्रभा तथा विभा

[उठकर]

पिता जी के चरणों में प्रणाम !

देवसिंह

बेटियो ! शीघ्र ही सौभाग्यवती होओ।

सूर्य्यसिंह

तथास्तु !

देवसिंह

फिर महाराज ! देर क्यों हो ? शुभस्य शीघ्रम्।

सूर्य्यसिंह

तो क्या यह शुभ कार्य्य यहीं सम्पन्न हो जाय ?

देवसिंह

अब क्या कन्नौज और उज्जैन में कोई भेद भी रह गया ? कन्या की माता है ही नहीं। मेरे लिये जैसा उज्जैन वैसा कन्नौज।

सूर्य्यसिंह

फिर तो अहोभाग्य! मंत्री, शीघ्र व्यवस्था करो। नर्तकियों को बुलाओ। गावें और आनन्द मनावें।

[नर्तकियाँ आती हैं और नाचती गाती हैं। कुमार-कुमारी परस्पर एक दूसरे को देखकर शर्माते हैं।]

धुन पीलू—ताल दादरा

कैसी प्यारी ख़बर दे दिया तुमने,
दिल की नज़र ले लिया तुमने।
है दिल ये शाद कि शादी ये मुबारक होवे,
जहाँ को प्यार की शादी ये मुबारक होवे।

सभी हैं शाद, सभी दिल से यही कहते हैं,
कि दोनों शाहों की गादी ये मुबारक होवे॥
　　　　लूटा नज़र से हिया तुमने।

कैसी प्यारी ख़बर०—

[परदा गिरता है।]

छठाँ दृश्य

[स्थान—सड़क]

[चौपट और थैला आते हैं।]

चौपटचन्द

क्यों बे, कहाँ हैं सेठ बुद्धूमल जी !

थैला

वे आते ही होंगे सरकार। आपको सड़क पर ही तो बुला लाने के लिये कहा था।

[सामने से बुधिया आती है। थैला एक ओर खिसक जाता है।]

बुधिया

कहिये सेठ चौपटचन्द जी !

चौपटचन्द

क्या है ?

बुधिया

वे वादे कहाँ गये ?

चौपटचन्द

[उतावला होकर जाना चाहता है। बुधिया दौड़कर हाथ पकड़ लेती है।]

यह क्या, बीच बाज़ार में यह हरक़त ? छोड़, छोड़।

बुधिया

[चिल्लाकर]

अरे लोगो, दौड़ो दौड़ो ! सेठ चौपटचन्द एक मेहतरानी की इज्ज़त लिये डालता है रे !

[दो-एक आदमी इधर-उधर से "क्या है, क्या है" कहते दौड़ पड़ते हैं।]

बुधिया

[लोगों को आते देख हाथ जोड़कर तथा झाड़ू उठाकर]

क्यों बे कमीने ! दूसरे की बहू-बेटियों पर इस तरह हाथ चलाता है !

[झाड़ू मारती है। सामने से बुद्धूमल को लेकर थैला आता है।]

बुद्धू

हैं, हैं, हैं ! कौन मेरे चौपटचन्द जी को मार रही है।

[नज़दीक आकर और देखकर]

हैं, तू यहाँ कहाँ !

बुधिया

यह भड़ुआ चौपट मेरी इज्जत ले रहा था, मैं जात की मेहतरानी इसके संग कैसे व्याह कर लेती ?

बुद्धू

तू मेहतरानी है ?

बुधिया

हाँ, सेठ जी, मैं मेहतरानी, मैं मेहतरानी। यह चौपट बड़ा जालिया है। इससे होशियार रहना।

[फिर चौपट को दो झाड़ू लगाती है।]

चौपटचन्द

[गुस्से से मारने की-सी मुद्रा करते हुए]

हट हरामजादी !

तमाशबीन

बस, बस, अब हाथ न लगाना। खुल गई सब क़लई हज़रत ! अब चुल्लू-भर पानी में डूब मरो।

चौपटचन्द

[बुद्धूमल से]

क्यों, क्या मुझको इसीलिये यहाँ बुलाया था ?

[थैला बुधिया से रहस्य-भरे इशारे करता है। बुधिया भी मुस्कुराती हुई वैसे ही इशारों में जवाब देती और चुपचाप उसके पास चली जाती है। धीरे से दोनों खिसक जाते हैं।]

बुद्धू

मैंने तुम्हें बुलाया था कि तुमने मुझे बुलाया था ? लेकिन ख़ैर जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ। मुझे तुम्हारी

असलियत का पता तो लग गया। अब मैं अपना धन, दान-धर्म में खर्च कर दूँगा। इन शादियों से कान पकड़े।

[कान पकड़ता है।]

चौपटचन्द

[ग़ुस्से से]

झूठा, दग़ाबाज़, मुझको यहाँ बुलवाकर बुधिया से पिटवा दिया!

बुद्धू

झूठा तू, दग़ाबाज़ तेरा बाप! मुझको आँखें दिखाता है?

[चौपटचन्द मारने को दौड़ता है। तमाशाई लोग बुद्धूमल की मदद को दौड़ पड़ते हैं। खूब मार-पीट प्रारम्भ हो जाती है। थैला "खामोश, खामोश" कहता हुआ आता है और सुन्दर बाई को सामने खड़ा कर देता है।]

थैला

सेठ जी और चौपटचन्द जी, ज़रा दोनों साहब इसको देखिये!

[तमाशबीनों से]

भाई साहब, आप लोग जानते ही होंगे, कि यह अपने शहर की सुन्दर बाई वेश्या है।......

चौपटचन्द

[दौड़कर थैला का मुँह पकड़ता हुआ]

चुप हरामज़ादा !

बुद्धू

[दौड़ कर उसके सिर पर एक छड़ी मारता हुआ]

तू हरामज़ादा, तेरा बाप हरामज़ादा ! लुटेरे ! मुझको इस तरह लूटना चाहता था ?

थैला

पुलिस, पुलिस, दंगा, दंगा।

[तमाशाई आक् थुः आक् थुः कहते हुए भाग जाते हैं। चौपट और बुद्धू भी लड़ते-भिड़ते भागते हैं।]

बुद्धू

[जाते-जाते]

थैला ! मेरे ईमानदार थैला ! अब मेरा सब धन तेरा है। किसी वक़्त मिलना। पुलिस आवे तो कह देना कुछ भी नहीं था।

[जाता है।]

थैला

आक् छिः ! धत्तेरे की।

बुधिया

[आकर]

कहो प्यारे ! कैसा रंग रहा ?

थैला

[उसके गले में हाथ डालते हुए]

बहुत अच्छा, बहुत अच्छा।

[दोनों उछलते हुए जाते हैं।]

[परदा उठता है।]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—कन्नौज राज-भवन का विवाह-मंडप। एक ओर वर-वधू-रूप में चन्द्र और प्रभा तथा दूसरी ओर मणि और विभा बैठे हैं। अपने-अपने स्थानों पर सूर्य्यसिंह, देवसिंह आदि बैठे हैं। वेश्या मुजरा कर रही है।]

धुन जंगला—ताल कहरवा

कैसो भरि लाये रंग पिचकरिया में
सारी रस में भिगाई, नई छवि छिटकाई
वही रंग छायो नयन-पुतरिया में।
नाहीं, नाहीं, लला ! नाहीं, छोड़ो-छोड़ो मोरी बाँही
काहे लूटत हो लाज डगरिया में।
मोरी लचकी कलैया पाँव परों मैं कन्हैया
दाग लगि जैहै नवल उमरिया में।
मोहे रंग में न बोरो, दूर, दूर हटो छोड़ो
बल परि जैहै पतरी कमरिया में।

सूर्य्यसिंह

बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !

मंत्री

अब कुछ मौके की चीज़ भी हो जाय। गज़लों में एक सेहरा !

वेश्या

[आदाब करके]

जो आज्ञा।

धुन पीलू—ताल दादरा

खुशी के दिन का है ख़ुशबू से मुअत्तर सेहरा,
ज़मी ज़माने के सहरों से य' बढ़ कर सेहरा।
शहर में सहरा में हर जा मची है इसकी धूम,
किसी ने देखा न होगा कहीं बेहतर सेहरा।
जो फूल हुस्न के आ आ के गुँथ गये इसमें,
तो बूए इश्क से भी ख़ूब है ये तर सेहरा।
हरएक बज़्म में सुन-सुन के दाद दी सब ने,
नजूम नज़्म में रोशन है ये क़मर सेहरा।
लगे जो प्रेम के मीठे-से तीर हरदिल को,
न दिल-फरेब बने आज ये क्योंकर सेहरा।

चोवदार

महाराज ! मालवा-नरेश अजितसिंह इस समय श्री-चरणों के दर्शन करना चाहते हैं।

सूर्य्यसिंह

[चौंक कर]

कौन ?

देवसिंह

[चौंक कर]

क्या मालवा-नरेश ?

चोवदार

[दोनों को प्रणाम करता हुआ]

हाँ महाराज।

चन्द्रसिंह

उन्हें बुला लीजिये पिताजी !

सूर्य्यसिंह

अच्छा जाओ, ले आओ।

[चोबदार जाता है और अजितसिंह को ले आता है।]

अजितसिंह

[सब के सामने अपना राजसी चोग़ा फेंक कर संन्यासी-वेष में खड़े हो जाते हैं।]

मैं दोनों महाराजाओं का अपराधी हूँ, इसलिये दोनों से एक साथ क्षमा माँगता हूँ। कुमार चन्द्रसिंह ने मुझे जीवन-दान देकर पश्चात्ताप का अवसर दिया है, इसलिये मैं उनका कृतज्ञ हूँ। इस कृतज्ञता के बदले इस शुभ अवसर पर मैं भी उनकी कुछ सेवा करना चाहता हूँ।

सूर्य्यसिंह

वह क्या राजन्!

अजितसिंह

[एक काग़ज़ सामने करके]

मेरा यह उपहार स्वीकार करने की कृपा की जाय।

सूर्य्यसिंह

मंत्री जी, देखिये क्या है।

मंत्री

[कागज़ लेकर पढ़ते हैं।]

"शुभ विवाह के उपलक्ष में मालवा का राज्य वर-बधू को भेंट।"

[सब आश्चर्य्य-चकित होते हैं।]

देवसिंह

ऐं, मालवा का राज भेंट में ! तुम क्या इतने बदल गये अजितसिंह !

अजितसिंह

[प्रसन्न होकर]

प्रेम के तीरों में ऐसी ही ताक़त है।

सूर्य्यसिंह

सुन्दरियो ! गाओ, उत्सव मनाओ। पूज्य पंडितो ! शुभ विवाह के मंगल-कृत्य पूरे हों।

[इधर नाच होता है, उधर पंडित लोग ज़ोर-ज़ोर से "ओ३म् गणानामूत्वा गणपति ग्वं हवामहे" आदि कहते हैं। सूर्य्य,देव, अजित आदि उठ कर "कल्याण, कल्याण" कहते हैं।]

(सामने का परदा गिरता है)

समाप्त